कथक नृत्य परिचय

कथक नृत्य परिचय

(प्रयाग संगीत समिति के प्रथम से चतुर्थ वर्ष तक
तथा इनके समकक्ष किसी भी परीक्षा के लिए)

●

लेखक

प्रो० हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव

एम० ए० (संगीत-गायन और दर्शन शास्त्र), एल० टी०, संगीत आचार्य,
संगीत प्रवीण (वादन), भू० पू० संगीत शिक्षक, इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद तथा भू० पू० शास्त्र-अध्यक्ष
प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद

●

प्राप्ति स्थान

संगीत सदन प्रकाशन

८८, साउथ मलाका, इलाहाबाद

दूरभाष : ६०५६७२

●

एकादश आवृत्ति १९९३ मूल्य ३० रुपया

प्रथम संस्करण की भूमिका

शास्त्रीय नृत्यों में कथक नृत्य का एक प्रमुख स्थान है और उत्तर प्रदेश को कथक नृत्य की जन्म-भूमि का गौरव प्राप्त है। मुगल-काल में इस नृत्य में शृङ्गारिकता अधिक बढ़ जाने के कारण कुछ बुराइयाँ आ गईं और फलस्वरूप जनता कथक नृत्य और नर्तकों को बुरी दृष्टि से देखने लगी। समय बदलने में देर नहीं लगती। स्वतन्त्रता की स्वर्णिम बेला से संगीत का पुनरुद्धार प्रारम्भ हुआ। भले घर की बालिकाएँ नृत्य सीखनें लगीं और अब प्रतिदिन उनकी संख्या बढ़ती जा रही है। हजारों बच्चे प्रतिवर्ष संगीत की परीक्षाओं में प्रविष्ट होने लगे हैं।

नृत्य के अच्छे शिक्षकों की तो कमी नहीं रही है, किन्तु अच्छी पुस्तकों की कमी अवश्य है। कारण, घरानेदार अच्छे नर्तक इस 'लिखा पढ़ी' से कोसों दूर रहना चाहते हैं। 'कहीं गाना-बजाना और नाचना कागज पर आ सकता है', ऐसा उन लोगों का विश्वास है। सूक्ष्म दृष्टि से यह भले ही सत्य हो, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से नहीं। वास्तव में कितने लोग संगीत को पेशा बनाने की दृष्टि से सीखना शुरू करते हैं? केवल कुछ खास वर्ग के लोगों में ही यह भावना प्रारम्भ से देखी जा सकती है। उनमें से अधिकांश लोग आगे चलकर इसे पेशा बना लेते हैं अथवा उन्हें बनाना पड़ जाता है। स्कूल, कालेज तथा विश्वविद्यालय में संगीत एक ऐच्छिक विषय होने के कारण वे किसी स्कूल-कालेज में नियुक्त हो जाते हैं। प्रचार की दृष्टि से ऐसे लोग संगीत की सच्ची सेवा करते हैं। ऐसे शिक्षकों व उनके शिक्षार्थियों को पुस्तकों की आवश्यकता होती है। सत्य है कि ऐसे शिक्षकों से न तो कलाकार-निर्माण की आशा की जा सकती है और न उनके शिक्षार्थी कलाकार बन सकते हैं। हमारे ये वाक्य सम्भव है कुछ को कटु लगें किन्तु इनकी सत्यता शत-प्रतिशत

प्रमाणित है। मेरे कहना का अर्थ यह कदापि नहीं कि पढ़े-लिखे लोग कलाकार नहीं हो सकते, बल्कि यों कहिये कि आज के युग की माँग कलाकारों को शिक्षित होना ही है। स्कूली शिक्षा मात्र से कलाकार का निर्माण नहीं हो सकता, किन्तु स्कूली शिक्षा द्वारा कलाकारों को उचित प्रशंसा अवश्य मिल सकती है।

स्कूली शिक्षा में संगीत का स्तर जो कुछ भी रहता हो, किंतु उनकी शिक्षा अपेक्षाकृत वैज्ञानिक होती है। उन्हें निर्धारित समय में निश्चित पाठ्यक्रम समाप्त करना पड़ता है। स्वीकृत पुस्तक का अध्ययन करना पड़ता है। नृत्य की शिक्षा केवल रंगमंच पर प्रदर्शन देने तक ही सीमित नहीं होती, बल्कि उसे समझना और समझकर नृत्य करना कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए तो सुकरात (Socrates) ने कहा है कि 'मुझे इस बात का ज्ञान है कि मुझे कुछ नहीं आता, इसलिए मैं सबसे ज्यादा बुद्धिमान हूँ।' स्वतः का ज्ञान परम आवश्यक है। कुछ विद्वानों ने इसे जीवन का उद्देश्य माना है। यहाँ पर हमारा दृष्टिकोण आध्यात्मिक नहीं है। संगीत में हम जो कुछ गायें, बजायें या नृत्य करें, उनका परिचय, परिभाषा, इतिहास, वास्तविक स्वरूप आदि का ज्ञान होना ही चाहिये। बिना इस ज्ञान के कोई व्यक्ति अच्छा कलाकार नहीं बन सकता। यह ज्ञान गुरू से तो प्राप्त होता ही है, पुस्तकों द्वारा भी प्राप्त होता है। आज के वैज्ञानिक युग में पुस्तक अप्रत्यक्ष गुरू है। अतः इस बढ़ते प्रचार में पुस्तक बहुत आवश्यक है।

कथक नृत्य पर अब तक बहुत थोड़ी ही पुस्तकें लिखी गई हैं, इसलिए मैंने इस विषय पर प्रारम्भिक विद्यार्थियों के लिए थोड़ा प्रयास किया है। परीक्षार्थियों की संख्या दिन प्रतिदिन अधिकाधिक बढ़ने के कारण प्रस्तुत पुस्तक गांधर्व मंडल बम्बई व प्रयाग संगीत समिति की प्रथम से चतुर्थ वर्ष तक तथा इनके समकक्ष किसी भी परीक्षा के उपयुक्त लिखी गई है। पुस्तक को सुबोध और सरल बनाने की चेष्टा की गई

है। आवश्यकतानुसार चित्र भी दे दिये गये हैं। विद्यार्थी वर्ग इस पुस्तक से थोड़ा भी लाभान्वित हुआ तो मैं अपने प्रयत्न को सार्थक समझूंगा।

—लेखक

दशम संस्करण की भूमिका

प्रस्तुत संस्करण प्रयाग संगीत समिति के संशोधित पाठ्यक्रम के अनुरूप बनायी गई है, अतः बहुत कुछ सामग्री जोड़ दी गई है तथा आवश्यकतानुसार पूर्व सामग्री में संशोधन व परिवर्धन किया गया है। मैं अपने मित्र व अनुज डॉ० पुरु दाधीच का बहुत ऋणी हूँ जिनसे इस संस्करण के लेखन में बड़ी सहायता मिली।

—लेखक

विषय सूची

प्रथम अध्याय

मुद्रा

प्रयाग संगीत समिति इलाहाबाद का पाठ्यक्रम

कथक नृत्य (प्रथम वर्ष)

(क्रियात्मक परीक्षा १०० अंकों की और शास्त्र का एक प्रश्न-पत्र ५० अंकों का)

क्रियात्मक

(१) तीनताल में ४ सरल ततकार (ठाह, दून और चौगुन की लयों में), १ थाट, १ सलामी, १ आमद, ५ साधारण तोड़े तथा २ तिहाइयाँ।

(२) दादरा और कहरवा तालों में २ आधुनिक छोटे नृत्य।

(३) तीनताल, झपताल, दादरा, कहरवा तालों के ठेकों को हाथ से ताली-खाली देते हुये ठाह और दुगुन में पढ़ने का अभ्यास।

(४) ततकार तथा तोड़ों को हाथ से ताली देकर ठाह तथा दुगुन में बोलना।

शास्त्र

(१) निम्नलिखित पारिभाषिक शब्दों का ज्ञान-नृत्य, कथक नृत्य, ततकार, थाट, सलामी, आमद, तोड़ा, ताल,लय, लय के प्रकार, मात्रा, आवर्तन, ठेका, सम, ताली (भरी), खाली, (फॉक), ठाह, दुगुन, तथा चौगुन, तिहाई तथा हस्तक।

(२) संगीत तथा भारत की दो मुख्य संगीत-पद्धतियों की व्याख्या।

(३) ततकार, तालों के ठेके तथा तोड़ों को भातखंडे अथवा विष्णु दिगम्बर ताल-पद्धति में लिखने का ज्ञान।

(४) तीनताल, झपताल, दादरा तथा कहरवा तालों का पूर्ण परिचय।

द्वितीय वर्ष (जूनियर डिप्लोमा)

(क्रियात्मक परीक्षा १०० अंकों की और शास्त्र का एक प्रश्न-पत्र ५० अंकों की। प्रथम वर्ष का पाठ्यक्रम भी सम्मिलित है।)

क्रियात्मक

(१) तीनताल में ४ अन्य कठिन ततकार हस्तक सहित, २ थाट, १ सलामी, ५ कठिन तोड़े, १ चक्करदार तोड़ा, १ आमद, २ सरल गतभाव तथा २ अच्छी तिहाइयाँ।

(२) झपताल में २ ततकार, १ ठाट, १ सलामी, ५ सरल तोड़े, एक आमद और २ तिहाइयाँ।

(३) दादरा और कहरवा तालों में लोक नृत्य।

(४) एकताल तथा सूलताल के ठेकों की ठाह, दुगुन व चौगुन हाथ पर ताली देकर बोलना।

(५) ततकार तथा तोड़ों को हाथ से ताली देकर ठाह, दुगुन और चौगुन लयों में बोलना।

शास्त्र

(१) परिभाषायें – नृत्य, नाट्य नृत्य, ताण्डव, लास्य, अंग, प्रत्यंग, पढ़न्त, गतभाव, मुद्रा, तथा चक्करदार तोड़ा।

(२) ध्वनि तथा नाद के विषय में साधारण ज्ञान।

(३) भातखण्डे अथवा विष्णु दिगम्बरताललिपि पद्धति का साधारण ज्ञान।

(४) ततकार, तालों के ठेके तथा तोड़ों को दोनों ताल-पद्धतियों में लिखने का ज्ञान।

(५) एकताल तथा सूलतालों का पूर्ण परिचय।

(६) कथक नृत्य का संक्षिप्त इतिहास।

(७) महाराज बिन्दादीन तथा कालिका प्रसाद का संक्षिप्त जीवन परिचय।

तृतीय वर्ष

क्रियात्मक परीक्षा १०० अंकों का तथा शास्त्र का एक प्रश्न-पत्र ५० अङ्कों का। पिछले वर्षों का पाठ्यक्रम भी सम्मिलित है।

क्रियात्मक

(१) तीनताल में २ कठिन ततकार हस्तकों सहित, पिछले पाठ्यक्रम में दिये हुये ठाटों के अतिरिक्त २ नये ठाट, १ आमद, १ सलामी, ५ कठिन तोड़े, १ परन तथा १ चक्करदार परन। ततकार को पैर से ठाह, दून, तिगुन तथा चौगुन लयों में निकालना तथा हाथ से ताली देकर बोलने का अभ्यास।

(२) झपताल में २ नये ततकार पलटों और हस्तकों सहित, १ चक्करदार तोड़ा, २ कठिन तोड़े तथा २ तिहाइयाँ।

(३) एकताल में २ थाट, १ सलामी, १ आमद, ४ ततकार हस्तक सहित, ४ तोड़े तथा २ तिहाइयाँ।

(४) सूलताल में २ ततकार तथा २ तोड़े।

(५) तीनताल में २ घूंघट का गत-भाव।

(६) तेवरा, चारताल, सूल ताल तथा धमार तालों को ठाह, दून तथा चौगुन लयों में हाथ से ताली देकर बोलना तथा पैर से इन ठेकों के ततकार को इन्हीं तीन लयों में निकालना।

(७) दो विशेष लोक नृत्य।

शास्त्र

(१) निम्नलिखित परिभाषिक शब्दों का ज्ञान—

(अ) परन, चक्करदार परन, मुष्टि, पताका, त्रिपताका, मुकुट करण, रेचक, अङ्गहार, उपांग तथा पलटा।

(ब) ध्वनि की उत्पत्ति, कंपन, आन्दोलन, नाद की विशेषतायें, नाद-स्थान, स्वर, चल और अचल स्वर, शुद्ध तथा विकृत स्वर, सप्तक (मन्द्र, मध्य और तार)।

(२) लखनऊ और जयपुर घरानों का संक्षिप्त इतिहास।

(३) अच्छन महाराज तथा जयलाल का संक्षिप्त जीवन परिचय।

(४) भातखण्डे तथा विष्णु दिगम्बर ताललिपि पद्धतियों का ज्ञान।

(५) तेवरा, चारताल (चौताल) आड़ा चारताल तथा धमार तालों का पूणं परिचय।

(६) भारतीय संगीत में नृत्य का स्थान।

(७) तबला तथा पखावज का पूर्ण परिचय।

चतुर्थ वर्ष (सीनियर डिप्लोमा)

क्रियात्मक परीक्षा १०० अङ्कों की तथा शास्त्र का एक प्रश्न पत्र ५० अङ्कों का। पिछले वर्षों का पाठ्यक्रम भी सम्मिलित है।

क्रियात्मक

(१) तीनताल, एकताल तथा झपताल में नाच की पूरी तैयारी। इन तालों में कम से कम १५ मिनट तक बिना बोलों को दुहराये हुये नृत्य प्रदर्शन करने की क्षमता। तीनताल में एक तालांगी, एक नृत्यांगी, एक कवितांगी तथा एक मिश्रांगी तोड़ों का अभ्यास। तीनताल में तोड़ों द्वारा अतीत तथा अनागत दिखाना।

(२) तीनताल में घूँघट के प्रकार तथा बंसी-पनघट के गतभाव।

(३) धमार ताल में ४ ततकार हस्तक सहित, २ थाट, १ सलामी, १ आमंद, ५ तोड़े, २ तिहाइयाँ, २ परनें तथा एक चक्करदार परन।

(४) विभिन्न लयकारियों का ज्ञान। तीनताल में ततकार द्वारा पचगुन तथा आड़ लयों को पैर तथा हाथ से ताली देकर दिखाना।

(५) तेवरा, चार ताल तथा आड़ा चार ताल में २-२ ततकार तथा २-२ तिहाइयाँ।

(६) कोई दो लोक नृत्य।

(७) पिछले वर्षों के सभी ताल तथा रूपक, दीपचन्दी, धुमाली, पंचम सवारी, आड़ा चार ताल तालों को हाथ से ताली देकर ठाह, दुगुन, तिगुन तथा चौगुन लयों में बोलना तथा पैर से निकालना।

(८) यमन, बिलावल, तथा भैरवी रागों में एक-एक स्वर-मालिका गाने का अभ्यास।

(९) तबला-वादन का प्रारम्भिक अभ्यास।

शास्त्र

(१) निम्नलिखित पारिभाषिक शब्दों का पूर्ण ज्ञान—

मुद्रा, निकास, अदा, घुमरिया, अंचित, कुंचित, रस, भाव, अनुभाव, भंगि-भेद, तैयारी, अभिनय, पिन्डी, प्रिमलू, स्तुति, विक्षिप्त, हस्तक, कसक, मसक, कटाक्ष, नाज, अन्दाज।

(२) भातखंडे तथा विष्णु दिगम्बर ताल लिपि पद्धतियों का पूर्ण ज्ञान तथा दोनों की तुलना।

(३) भारत के शास्त्रीय नृत्य—कथक, कथाकलि, मणिपुरी, भरतनाट्यम का परिचयात्मक अध्ययन और इनकी तुलना।

(४) निम्न का पूर्ण ज्ञान—संयुक्त और असंयुक्त मुद्रायें, नृत्य में भाव का महत्व, प्रचलित गतभावों के कथानकों का अध्ययन, नृत्य से लाभ, आधुनिक नृत्यों की विशेषतायें।

(५) पिछले तथा इस वर्ष के समस्त तालों के ठेके ततकार तथा बोलादि को विष्णु दिगम्बर तथा मातखंडे ताल-लिपियों में विभिन्न लयों में लिखने की क्षमता। ताल के दस प्राणों का ज्ञान।

(६) व्याख्या—वर्ण, आरोह-अवरोह, अलंकार, थाट, राग, सुरावर्त, (स्वरमालिका), लयकारी, लय तथा लयकारी का भेद।

(७) यमन, बिलावल तथा भैरवी रागों का पूर्ण परिचय और इनमें सरल गीत गाने की क्षमता।

(८) रूपक, आड़ा चारताल, दीपचन्दी, धुमाली, तथा पंचम सवारी तालों का पूर्ण परिचय।

(९) वर्तमान समय के किन्हीं दो प्रसिद्ध कथक नृत्यकारों का परिचय तथा उनकी नृत्य शैलियों का तुलनात्मक अध्ययन।

(१०) संगीत तथा नृत्य सम्बन्धी विषयों पर लेख लिखने का अभ्यास।

□

ताललिपि पद्धति

	भातखण्डे पद्धति	विष्णु दिगम्बर पद्धति
ताल चिन्ह—		
सम	×	१
खाली	०	+
ताली	ताली की संख्या जैसे २, ३ आदि	मात्रा की संख्या जैसे ५, १३
विभाग	।	विभाग नहीं होता। एक आवृत्ति के बाद एक खड़ी लकीर खींचते हैं।
मात्रा काल—		
एक मात्रा	ता (कोई चिह्न नहीं)	ता
$1\frac{1}{2}$ मात्रा	ता -ता	ता॰ ता ०
२ मात्रा	ता—	ता ऽ
३ मात्रा	ता — —	ता॰ ऽ
४ मात्रा	ता — — —	ता ×
आधी मात्रा	तत तत	त त त त ० ० ० ०
चौथाई मात्रा	थेईतत	थे इ त त
$\frac{1}{3}$ मात्रा	तातेटे	ता ते टे $\frac{1}{3}$ $\frac{1}{3}$ $\frac{1}{3}$
$\frac{1}{6}$ मात्रा	दिगदिगदिग	दि ग दि ग दि ग $\frac{1}{6}$ $\frac{1}{6}$ $\frac{1}{6}$ $\frac{1}{6}$ $\frac{1}{6}$ $\frac{1}{6}$
अर्ध विराम	ता,तत	अर्ध विराम नहीं होता
	ता = $\frac{1}{2}$, ता — $\frac{1}{2}$, त = $\frac{1}{2}$	

नृत्य और उसके प्रकार

गीत वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते ।
नृत्य वाद्यानुगं प्रोक्तं वाद्य गीतानुवर्त्तिचः ॥

—संगीत रत्नाकर

सभी संगीत-प्रेमी जानते हैं कि गायन, वादन तथा नृत्य को संगीत कहा गया है। पंडित शारंगदेव लिखित उपर्युक्त दोहे से यह बात स्पष्ट है कि संगीत के तीन अंग हैं। इन तीनों में गायन को श्रेष्ठ माना गया है, क्योंकि नृत्य वादन के और वादन गायन के आधीन है। वर्तमान समय में इन तीनों का अलग-अलग विकास हुआ है। प्राचीन काल में, जिस समय नाटक का बहुत प्रचार था, संगीत नाटक का अंग माना जाता था। इसीलिए तो पाँचवीं शताब्दी में जब भरत ने 'नाट्य शास्त्र' नामक ग्रंथ लिखा तो उसने अंतिम छः अध्यायों में संगीत के सिद्धांतों का भी वर्णन किया है। पुस्तक का नाम 'नाट्य शास्त्र' से यह स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ नाट्य पर लिखा गया है। अतः पाठकों के मन में विचार आ सकता है कि इसका सम्बन्ध संगीत से क्या है ?

प्राचीन काल में संगीत का घनिष्ट सम्बन्ध नाट्य से था और संगीत को नाट्य का अंग माना जाता था। नाटक में अभिनय के साथ-साथ नृत्य, गायन तथा वादन का भी पुट दिया जाता था, अतः दर्शकों को अभिनय के साथ-साथ संगीत का भी आनन्द मिलता था। आजकल प्राचीन विचार-धारा नहीं रही। अब संगीत का अपना अलग अस्तित्व है, अपना अलग स्थान है। अब इसे नाट्य का अंग नहीं माना जाता है।

पौराणिक विचारधारा के अनुसार कला और विद्या का जन्म वेद से माना गया है। एक पौराणिक कथा है कि सर्वप्रथम ब्रह्मा ने भरत को संगीत की शिक्षा दी और भरत ने उसे नाट्य शास्त्र में 'संकलित कर साधारण जनता में प्रचार किया। भगवान शंकर ने तांडव और पार्वती देवी ने लास्य नृत्य उसमें जोड़ दिया।

प्राचीन काल में संगीत का उद्देश्य धार्मिक था, किन्तु आजकल इसे केवल मनोरंजन का साधन माना जाता है। प्राचीन काल में देवी-देवता और महर्षियों से सम्बन्धित नाटक खेले जाते थे। अधिकतर महाभारत और रामायण की कथानकों का अभिनय होता था। देवताओं की उपासना के लिए उनसे सम्वद्ध लोक-कल्याणकारी कथाओं का अभिनय किया जाता था। इसके पीछे लोक-कल्याण की भावना थी। प्राचीन भारतीय संस्कृति में वीर और भक्ति रस की वहुतायत थी, अतः वीर और भक्ति रस की रचनायें होती थीं। समय के साथ-साथ विचारधारायें भी बदलती रहीं हैं। प्राचीन काल में जव भक्ति और वीर रस प्रधान होता था, अब आजकल शृंगार रस प्रधान हो गया है। आजकल शृंगार प्रधान नृत्यों को लोग अधिक देखना पसन्द करते हैं, इसलिए आधुनिक नृत्यों में पश्चिमी नृत्य का बहुत कुछ प्रभाव दिखाई पड़ता है। पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित लोग बाल रूम, कैवरे, राक एण्ड रोल आदि नृत्यों के प्रति अधिक आकर्षित होते हैं।

नृत्य के मुख्य दो प्रकार हैं—शास्त्रीय नृत्य और लोक नृत्य। शास्त्रीय नृत्य से हमारा मतलव उस नृत्य से है जिसमें कुछ विशेष नियमों का पालन होता है और जो पूर्व ग्रन्थों पर आधारित होता है। दक्षिण भारत का भरतनाट्यम नृत्य, उत्तर का कथक (नटवरी) नृत्य और पूर्व का मणिपुरी नृत्य शास्त्रीय नृत्य कहलाते हैं। लोक नृत्य में शिकारी नृत्य, गरबा नृत्य, भांगड़ा नृत्य आदि आते हैं। आगे इनका संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

ताण्डव नृत्य

"वीर रसे- महोत्सहो पुरुषो यत्र नृत्यति ।
रौद्र भाव रसो पत्तिस्त ताण्डव मिति स्मृतं ॥"

एक पौराणिक कथा के अनुसार त्रिपुरासुर राक्षस का वध करने के लिये भगवान शंकर ने वीर और रौद्र रस प्रधान जो नृत्य किया था उसे तांडव अथवा शिव तांडव कहते हैं। अतः स्पष्ट है कि तांडव नृत्य वीर रस प्रधान और पुरुषों के लिए उपयुक्त है, क्योंकि इसमें ऐसे अंगहारों का प्रदर्शन किया जाता है जो स्त्रियों के लिए उपयुक्त नहीं है। अंगों की चपलता, वीर, क्रोध तथा रौद्र रस-प्रदर्शन के लिए यह बहुत उपयुक्त नृत्य-शैली है। नृत्य के समय क्रोध की ज्वाला भभकने लगती है, धरती काँपती सी प्रतीत होती है और ऐसा लगता है कि मानो सम्पूर्ण विश्व में संहार क्रिया हो रही हो। अतः ऐसी अभिनय सुकोमल स्त्रियों के लिए कैसे शोभा दे सकती है? स्त्रियों के लिए तो लास्य नृत्य माना गया है जिसका वर्णन हम आगे करेंगे। तांडव नृत्य में विश्व की पांच स्थितियाँ—सृष्टि, स्थिति, तिरोभाव, आविर्भाव और संहार दिखाई जाती है। अन्त में आसुरी प्रवृत्तियों पर विजय के आनन्द से नृत्य समाप्त हो जाता है।

ताण्डव नृत्य की वेश-भूषा

सिर पर जटा और गंगा की धारा, जटा के ऊपर दूज का चन्द्रमा, गर्दन और हाथ में सर्प लपेटे हुए, कानों में कुण्डल, गले में रुद्राक्ष की

माला, माथे पर तीसरा नेत्र, वदन में भभूत, कमर में मृग-छाला, एक हाथ में डमरू और दूसरे हाथ में त्रिशूल—इस प्रकार की वेश-भूषा में तांडव नृत्य किया करते हैं।

मुद्रायें

इस नृत्य में अंगों की तोड़-मरोड़, विशेषतः कटि की, बहुत महत्व रखती है। इसके चार विभाग होते हैं—(१) अभंग, (२) समभंग, (३) त्रिभंग और (४) अतिभंग।

(१) **अभंग**—इसमें साधारण तोड़-मरोड़ किया जाता है।

(२) **समभंग**—इसमें बराबर तोड़-मरोड़ किया जाता है।

(३) **त्रिभंग**—इसमें तिरछे प्रकार के तोड़-मरोड़ का अभिनय किया जाता है।

(४) **अतिभंग**—इसमें ऊँची मरोड़ का अभिनय किया जाता है।

वाद्य

इस नृत्य में अधिकतर डमरू, नौबत, शंख, घड़ियाल, झाँझ, मृदंग, धौंसा आदि वाद्य बजाये जाते हैं। अंगों के जोरदार चलन और विभिन्न वाद्यों-का यथा-समय प्रयोग रौद्र-रस के संचार में सहायक होता है। ऐसा मालूम पड़ने लगता है कि संसार का संहार हो रहा हो, पता नहीं संसार का क्या होने वाला है। इन स्थितियों के अनुकूल वाद्यों का प्रयोग होता है।

तांडव नृत्य के प्रकार

(१) **संहार तांडव**—जब संसार में पाप अधिक हो जाता है, तब जगत का नाश करने के लिए भगवान शंकर जो नृत्य करते हैं, उसे संहार तांडव नृत्य कहते हैं।

(२) **त्रिपुर तांडव**—त्रपुरासुर को मारते समय शंकर भगवान ने जो नृत्य किया था, उसे त्रिपुर तांडव नृत्य कहते हैं।

(३) **कालिका तांडव**—कालिका तांडव नृत्य में इस भावना का अभिनय दिखाया जाता है कि आत्मा किस प्रकार संसार के चक्र में फँस कर दुःखी होती है और किस प्रकार अनेक योनियों में घूमते हुये विश्व के अनेक बन्धनों से मुक्त होती है।

(४) **संध्या तांडव** - यह नृत्य करुण रस से प्रारम्भ होता है और रौद्र, भयानक रस में समाप्त होता है।

(५) **गौरी तांडव**—इस नृत्य में यह प्रदर्शित किया जाता है कि भगवान शंकर गौरी से किस प्रकार प्रेम करते हैं।

तांडव में धत्तिक, धिगिन, धलाँग, धाक्ड़, धान, धलधल, थुंग आदि बोलों का अधिक प्रयोग होता है।

□

लास्य नृत्य

गौवनस्त्री विलासिन्यः कामभाव विलक्षणां।
पदङ्ग हार वैदध्यात कुर्युलास्यमदिरितः ॥

अर्थात् लास्य नृत्य स्त्रियों के लिये उपयुक्त है, जिसमें अंग और पद के संचालन द्वारा श्रृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति की जाती है।

कहा जाता है कि भगवान शंकर द्वारा त्रिपुरासुर का वध करने की खुशी में पार्वती ने श्रृंगार रस प्रधान जो नृत्य किया था उसे 'लास्य नृत्य' कहते हैं। स्त्री श्रृंगार और कोमलता की प्रतीक मानी गई है। अतः लास्य नृत्य में श्रृंगार और कोमलता प्रधान है। कहते

हैं कि पार्वती ने बाणासुर की कन्या को लास्य नृत्य की शिक्षा दी। ऊषा ने द्वारिका में लास्य नृत्य का प्रचार किया और बाद में यह नृत्य अन्य स्थानों में फैला। कहा जाता है कि लास्य को ही सर्वांग रूप देने के लिये भगवान कृष्ण ने 'रास-मण्डल' प्रारम्भ किया। दक्षिण भारत में रास को 'हल्लीसक' कहते हैं। कथक, भरतनाट्यम, मणिपुरी आदि नृत्य आजकल जो भी प्रचलित हैं, इन सबका जन्म 'लास्य' से ही माना गया है। लास्य मनुष्य की कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है। ऐसे तो स्त्री-पुरुष दोनों ही इस नृत्य को कर सकते हैं, किन्तु यह स्त्रियों के लिए अधिक उपयुक्त है। इसके तीन प्रकार हैं –

(१) **विकट नृत्य**—जिस नृत्य को नाचते हुये लय, ताल भाव का प्रदर्शन किया जाता है, उसे विकट नृत्य कहते हैं।

(२) **विषम नृत्य**—आड़ा, गोल और टेढ़ा घूमकर जो नृत्य किया जाता है उसे विषम नृत्य कहते हैं।

(३) **लघु नृत्य**—घुँघरुओं से पृथ्वी पर झंकार करते हुये, एड़ी उठा कर ताल और लय के साथ नाचने को लघु नृत्य कहते हैं।

नीचे तीन ताल में निबद्ध लास्य अंग का एक टुकड़ा देखिये।

नाऽचत गाऽवत गोऽपाऽ ललाऽल। सखियन संगरस बरसाऽ
०　　　　　　　　　　　　　　　　३

वतसर। साऽवत वाऽनट वरकीऽ बांऽसुरि। याऽपैऽ चेऽतन
　　　　×　　　　　　　　　　　　　　　२

हूंऽजड़ मैंऽऽऽ। आमतत थेइतत थेइ आमतत। थेइतत थेइ
　　　　　　　०　　　　　　　　　　　　३

आमतत थेइतत।
　　　　　×

भरतनाट्यम

भरतनाट्यम दक्षिण भारत का, जो कि अब केवल दक्षिण भारत में ही नहीं वरन् उत्तर भारत में भी लोकप्रिय शास्त्रीय नृत्य है।

इसका सम्बन्ध देवदासियों से रहा है और उन्हीं के कारण यह आज हमें अपने मूल रूप में प्राप्त हो सका है। कहते हैं कि दक्षिण भारत, उत्तर भारत के असमान बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित रहा, अतः न तो वहाँ द्रविण की संगीत पर वाह्य प्रभाव पड़ा और न तो स्वयं बदला ही। इसलिए भरतनाट्यम की प्राचीन प्रणाली अब भी देखने को मिलती है। इस नृत्य में मुद्राओं का बाहुल्य है। इसमें बिखरी हुई कुछ कथावस्तु भी मिलती है, पर कथक के समान कथानक नहीं होता। इसमें नर्तक अकेले ही अथवा ३-४ के समूह में नृत्य करता है। भरत-नाट्यम नृत्य में मृदंगम से संगति की जाती है और साथ में कर्नाटकी गीत गाते हैं या वाद्यों पर कर्नाटक संगीत की धुनें बजाई जाती हैं।

भरतनाट्यम नृत्य का क्रम

इस नृत्य को मोटे तौर से सात भागों में बाँटा जा सकता है, जिन्हें चरण कहते हैं। इनका क्रम इस प्रकार है—

(१) **अल्लारिपु**—भरतनाट्यम नृत्य का प्रारम्भ प्रार्थना की मुद्रा से होता है जिसे अल्लारिपु कहते हैं। इसमें पुष्पांजलि अर्पित करने की मुद्रा में खड़े होते हैं। इसकी विशेषता यह है कि इसमें शरीर के दोनों तरफ के अंग एक से रहते हैं। जिस प्रकार बाँया अंग रहता है, उसी प्रकार दाहिना अंग भी रहता है। कलाकार इस नृत्य को सदैव दर्शक के सामने मुँह करके करता है। तत्पश्चात् गला, आँख, भौहों के परिचालन से अपने नृत्य द्वारा अपने इष्ट देवता की आराधना करता है कि वह इस कार्य में हमें सफलता प्रदान करे। यह भरतनाट्यम का प्रथम चरण है।

(२) **जेथीस्वरम्**—नृत्य के दूसरे चरण में गायन के साथ जो नृत्य किया जाता है उसे जेथीस्वरम् कहते हैं।

(३) **शब्दम्**—नृत्य के तीसरे चरण में साहित्यिक शब्दों में ईश्वर की वन्दना और राजा की स्तुति आदि की जाती है। गायक गीत गाता है और नर्तकी गीत के भाव को नृत्य द्वारा प्रदर्शित करती है।

(४) **वर्णम्**—यह भरतनाट्यम नृत्य का महत्वपूर्ण अंश है। नृत्य के इस चरण में पद-संचालन और अंग की स्थितियों, दोनों का पूर्ण समन्वय देखने को मिलता है। ताल-लय की विशेषता एवं विभिन्न प्रकार की मुद्राओं का प्रदर्शन किया जाता है। साधारणतया प्रियतम की प्रतीक्षा में नायिका का भाव दिखाया जाता है। कलाकार को अपनी कला का प्रदर्शन करने में बड़ी छूट रहती है।

(५) पदम्—यह भरतनाट्यम नृत्य का पाँचवां चरण है। इसमें श्रृंगारिक भावजन्य चेष्टाओं की प्रधानता रहती है।

(६) तिल्लाना—यह नृत्य का छठवाँ चरण है। इसमें घुँघरुओं की तीव्र गति से दर्शकों के मन में उत्तेजना पैदा की जाती है।

(७) श्लोकम्—इसका सातवाँ और अन्तिम चरण श्लोकम् है। इसमें संस्कृत के श्लोकों द्वारा भगवान कृष्ण की आराधना की जाती है।

भरतनाट्यम की वेश-भूषा

इस नृत्य में मरहठा स्त्रियों की भाँति लम्वी साड़ी पहनते हैं। साड़ी दोनों पैरों से चिपकी रहती है। धोती के ऊपर वाले हिस्से को दुपट्टे की भाँति कंधे पर रखते हुये कमर में लपेट लेते हैं। कमर में करधनी तथा वाजू और गले में आभूषण पहनते हैं। वाल सुन्दर ढंग से बँधे हुये चोटीदार बनाये जाते हैं। मस्तक पर तिलक, भौहों के ऊपर से कपोल के दोनों तरफ बिन्दी और ओठों व गालों पर हल्की सी लाली लगाते हैं। इसे स्त्री या पुरुष कोई भी कर सकता है। जब पुरुष इस नृत्य का प्रदर्शन करता है तो इसे लोग कचपुरी नृत्य कहते हैं।

इसके पाँच आसन होते हैं—पद्म, सृष्टि, योग, वीर और सिद्ध।

घुटने के मोड़ चार तरह के माने गये हैं—मन्डला, अर्धमन्डला, सममन्डला और नृत्तमन्डला।

इसमें ३ पाद विक्षेप होते हैं—अंचित, कुन्चित, उर्धान्चित। गति के ४ प्रकार होते हैं—करण, अंगहार, रेचक और पिंडीवध।

भरतनाट्यम में देवदासियों का योग

भरतनाट्यम को बनाये रखने में दक्षिण भारत के देवदासियों का

महत्वपूर्ण योग रहा है। उनमें यह कला परम्परागत चली आ रही है। भरतनाट्यम के आचार्य 'नत्तुवन' कहलाते हैं, जो निःशुल्क शिक्षा देते हैं। जब उनकी शिष्यायें धन कमाने लगती हैं, तो वे अपने आचार्य 'नत्तुवन' को भी अपने अर्जित धन में से एक अंश आजीवन देती रहती हैं। देवदासियाँ तीन प्रकार की होती थीं—राजदासी, देवदासी और स्वदासी।

राजदासी—जो दासियाँ राज्य-दरबारों में अपनी कला का प्रदर्शन करती थीं उन्हें राजदासी कहा जाता था।

देवदासी—जो दासियाँ देवमंदिरों में नृत्य करती थीं उन्हें देवदासी कहा जाता था।

स्वदासी—जो दासियाँ कुछ विशेष अवसरों पर ही नृत्य करती थीं उनकी यह कोई पेशा न थी, उन्हें स्वदासी कहा जाता था। राजदासियाँ और देवदासियाँ अपनी जीविका नृत्य द्वारा ही चलाती थीं।

प्रश्न

(१) भरतनाट्यम नृत्य कहाँ का नृत्य है? इसकी क्या वेश-भूषा होती है?

(२) भरतनाट्यम नृत्य का क्या क्रम है? समझाइये।

कथकलि

कथकलि दक्षिण भारत का एक प्राचीन शास्त्रीय नृत्य है। इस नृत्य की वेश-भूषा ही इसकी मुख्य पहचान है। भारत में सभी प्रदेशों में यह नृत्य प्रचलित है, किन्तु केरल प्रदेश में इसका अधिक प्रचार है। इसमें संगीत, कथा तथा अभिनय का सुन्दर संयोग है, इसलिए एक साधारण कथकलि-मंडली में २०-२२ व्यक्ति रहते हैं। मंडली में कुछ गायक, कुछ वादक, कुछ नर्तक और कुछ सजाने वाले होते हैं। इसमें रामायण, महाभारत अथवा किसी पौराणिक कथा का चित्रण किया जाता है। अभिनेता स्वयं कुछ नहीं बोलता जिस पात्र का सम्वाद होता है, वह रंगमंच पर आकर कथा के अनुसार अभिनय करता है और पीछे से संगीतमय कविताओं के द्वारा उसके भावों को स्पष्ट किया जाता है। संगति के लिये 'मर्दल' (मृदंग), रुद्र वीणा और वन्शी का प्रयोग होता है। अभिनेता पैरों में घुंघरू बाँधता है। स्त्री का अभिनय भी अधिकतर पुरुष करते हैं। इस नृत्य की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें नवों रसों का उपयोग होता है, जब कि भारत की अन्य नृत्य शैलियों में शृंगार रस की अधिकता होती है और अन्य रस गौण रहते हैं। कथकलि में भारतीय नृत्य की बहुत सी विशेषतायें मौजूद हैं, जैसे हस्तक, मुद्रा, अंगहार, कुन्डल आदि।

कथकलि नृत्य का वर्णन

सर्वप्रथम परदे के पीछे से ईश्वर-प्रार्थना की जाती है और कथा-नायकों का परिचय दिया जाता है, तत्पश्चात् उसी ताल में मर्दल वजता है और फिर सभी वादक मिलकर वजाते हैं। साथ ही अभिनेता या अभिनेत्री धीरे-धीरे रंग-मंच पर आते हैं और पात्र के अनुरूप आंगिक मुद्राओं द्वारा भाव प्रकट करते हैं। फिर कथा प्रसंग के अनुसार उसके रस, भाव, मुद्रायें आदि वदलती रहेंगी। इस तरह नाटक की सारी बातें अभिनेता मुख से न बोलते हुए अपने आंगिक मुद्राओं एवं भावों द्वारा दर्शकों के सम्मुख स्पष्ट करता है। पीछे से उसके भावों को कविता में गाये जाने के कारण श्रोताओं को समझने में बड़ी सुविधा होती है। लय और ताल पर ही नाट्य और नृत्य का सारा कार्यक्रम होता है। कथा के छन्द भिन्न-भिन्न तालों में वँधे रहते हैं।

वेश-भूषा

कथकलि नर्तकों की वेश-भूषा भी अपने ढंग की होती है। शरीर पर एक चुस्त जाकेट और एक विचित्र प्रकार का रंग-विरंगा घाँघरा पहनते हैं। वालों को बहुत सुन्दर ढंग से सजाया जाता है। नर्तक के अभिनय के अनुसार ही उसका शृंगार होता है। वेश-भूषा में मुख का शृंगार विशेष ढंग से होता है। चेहरे को लाल, पीला, सफेद पाउडर व बिंदी से सजाकर, भौंहों पर काला रंग, आंखों में काजल व ओठों में सुर्खी लगाई जाती है। पात्र के अनुसार मस्तक पर तिलक और सिर पर गोल मुकुट लगाया जाता है।

कभी-कभी इस नृत्य में एक लम्बा चोंगा भी पहना जाता है जिसका घेरा चौड़ा और वाहें फैली हुई रहती हैं। ऊपर से एक चादर भी ओढ़ लेते हैं। कुंडल, लकड़ी की चूड़ी, कवच, मुकुट, हार, नूपुर, फूल-माला आदि से शृंगार करते हैं। सजावट और शृंगार अभिनय के अनुसार होता है। राम, रावण, कृष्ण, शिव, पार्वती आदि का शृंगार भी उन्हीं की भूमिका के अनुसार होता है।

मणिपुरी नृत्य

इस नृत्य का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं प्राप्त होता कि इसकी उत्पत्ति कब और किसके द्वारा हुई। मणिपुर (असम) में अधिक प्रचलित होने के कारण इसे मणिपुरी नृत्य कहते हैं। इसकी विशेषताओं को देखने से ऐसा आभास होता है कि इस नृत्य की जन्म-भूमि मणिपुरी ही रही होगी। इनके जन्म के विषय में अनेक दन्त-कथायें हैं, किन्तु उन्हें प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। यह पूर्वी बंगाल और असम का शास्त्रीय और लोक नृत्य दोनों है। इसका प्रचार बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा अन्य प्रांतों में है।

इस नृत्य को अधिकतर बालिकायें ही करती हैं, किन्तु बालकों अथवा पुरुषों के लिये वर्ज्य नहीं है। पुरुष भी इसे करते हैं। मणिपुरी नृत्य एक प्रकार की रासलीला है। इसमें नर्तक और नर्तकी कृष्ण, राधा और गोपियों का रूप बनाकर नृत्य करती हैं और अंगों के संचालन द्वारा रस-सृष्टि करती हैं।

मणिपुरी नृत्य में रासलीला के चार प्रकार हैं—बसन्त रास, महा-रास, कुन्जरास और नित्यरास। किसी में राधा के आत्मसमर्पण का भाव है तो किसी में कृष्ण-राधा के श्रृंगार का और किसी में कृष्ण के वियोग का। मणिपुर के अन्य नृत्य भी रास-शैली पर आधारित हैं। सभी में पाद निक्षेप, भ्रू-संचालन, हस्त-मुद्रायें तथा अंगहार सभी कुछ लास्यमय रहता है।

वेश-भूषा

मणिपुर अपनी वेश-भूषा एवं साज-श्रृंगार के लिए विख्यात है। इसलिये मणिपुर नृत्य की वेश-भूषा भी बहुत आकर्षक और रंग-बिरंगी होती है। इतने आकर्षक वस्त्र व आभूषण किसी अन्य नृत्य-शैली में नहीं मिलते।

इस नृत्य की वेश-भूषा महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ कला की एक नमूना होती है। नारी पात्रों का जो पहिनावा है वह बहुत मनमोहक एवं सुन्दर होता है जिसे 'पटलोई' कहते हैं। चमकीले साटन अथवा रेशमी कपड़े का ढीला लँहगा होता है जिसे 'कूमिन' कहते हैं। इस पर शीशा एवं जरी की बहुत सुन्दर पच्चीकारी रहती है। इसके ऊपर एक पारदर्शक सिल्क या 'पेशवान' होता है। कूमिन को घुटने के पास फुलाने के लिये अन्दर से उसमें बाँस की खपच्चियों को गोला कर बाँध दिया जाता है। इससे यह लँहगा फूला हुआ और गोल रहता है। गोपियाँ प्रायः लाल रंग की और राधा हरे रंग की वस्त्र पहनती हैं। ऊपर चोली पहनती हैं, जिस पर जरी, रेशम या गोटे से तरह-तरह के बेल-बूटे बने रहते हैं। सिर के बालों को एक गाँठ जैसा बाँधा जाता है और सिर के पिछले भाग की ओर ऊँचा उठा कर कस दिया जाता है। इस गाँठ के ऊपर चाँदी का एक आभूषण पहना जाता है। बालों के ऊपर एक पार-दर्शक वस्त्र ओढ़नी की तरह डाला जाता है जो मुख को भी ढाँके रहता है। यह अत्यन्त पारदर्शक वस्त्र होने के कारण दर्शकों को मुख के हाव-भाव को देखने में कोई कठिनाई नहीं होती। उसके मुख और हाथों को अनेक प्रकार से सजाया जाता है। आँख, माथा और कपोल पर चन्दन अथवा अन्य रंगों से चित्रकारी की जाती है। काजल, पाउडर तो प्रयोग करते ही हैं, माथे पर एक प्रकार का तिलक लगाया जाता है। हाथ में आलता, मेंहदी, नाखून में नेलपालिश आदि का उपयोग होता है। बाल, कान, भुजा और कलाइयों में बहुत ही आकर्षक आभूषण धारण किये

आते हैं। हाथों में सुन्दर चूड़ियाँ, गले, बाल और कलाइयों में पुष्प-माला से सुन्दरता निखर उठती है। गोपियों की भाँति कृष्ण का भी उत्तम शृंगार किया जाता है, उन्हें प्रायः जोगिया रंग के वस्त्र पहनाते हैं। काछ लगी रेशमी मर्दानी धोती तथा ऊपर चोली की तरह बण्डी और मोर-पंखियों से बनी मुकुट पहनाते हैं तथा अनेक प्रकार के आभूषण तथा माला पहनाते हैं। कृष्ण के कमर में चाँदी एवं शीशे की कामदार पेटी पहनाते हैं।

□

कथक नृत्य

कथक नृत्य उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब आदि प्रांतों में प्रचलित है। यह यहाँ का शास्त्रीय नृत्य है। कथक शब्द की उत्पत्ति कथा से हुई और 'कथनं करोति कथकः' अर्थात् जो कथन करता है वह कथक है। वैसे तो अन्य नृत्यों में भी कथानक होता है, किन्तु इस नृत्य में कथा प्रधान है, इसलिये इसे कथक की संज्ञा दी गई है।

कथक की प्राचीन परम्परा है। महापुराण, महाभारत तथा नाट्यशास्त्र में भी 'कथक' शब्द मिलता है। पाली शब्द कोष में 'कथको' एक उपदेशक के लिये प्रयुक्त किया गया है। मोहन-जोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में नृत्य करती हुई स्त्रियों की जो मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं उनकी मुद्राओं से पता लगता है कि वे कथक नृत्य कर रही हैं।

'संगीत रत्नाकर' के नृत्याध्याय में जो तेरहवीं शताब्दी का ग्रन्थ है कथक शब्द का उल्लेख है। प्राचीन काल में कथावाचकों द्वारा मन्दिरों में पौराणिक कथाएँ हुआ करती थीं। कथा के बाद जब कीर्तन होता था तो नट लोग जिन्हें भरत कहते थे, नृत्य करते थे। बाद में इस नट जाति के लोगों में कुछ बुराइयाँ आ जाने के कारण उनका समाज में बहिष्कार हो गया। अतः इन नटों ने स्वयं कथा कह-कह कर नृत्य करना प्रारम्भ कर दिया जिससे उनकी जीविका चलती रहे। यही नट लोग बाद में कत्थक या कथक कहलाने लगे। नृत्य के शास्त्रीय सिद्धांतों से परिचित होकर वे भगवान कृष्ण की लीलाओं का नृत्य प्रधान नाटक व स्वाँग किया करते थे, अतः भक्त-समुदाय से उन्हें यश और धन दोनों प्राप्त होता रहा। बाद में यह नृत्य मुख्यतः राजदरबारों से सम्बन्धित रहा, अतः शृंगार और अलंकारप्रियता इसकी विशेषता हो गई। इस नृत्य में तबला-पखावज से संगति की जाती है। नर्तक तैयारी के साथ पैरों की गति से तबला-पखावज के बोलों को निकालते हैं। इसमें अधिकतर परम्परागत कृष्ण चरित्र का चित्रण किया जाता है। इस नृत्य पर हम आगे विस्तार में विचार करेंगे।

□

लोक नृत्य

उत्तर भारत लोक नृत्यों से भरा है। प्रत्येक प्रांत में वहाँ के सुन्दर लोक नृत्य मिल जायेंगे, जैसे गुजरात में गरबा और गरबी नृत्य, पंजाब में भाँगड़ा नृत्य, कुमायूँ प्रदेश में छपेली नृत्य आदि। इन नृत्यों में स्वाभाविकता छूती रहती है, कृतिमता नहीं रहती है। मनुष्य के हृदय में उपजते भावों को सरलता से व्यक्त करना ही उनकी विशिष्टता है। जहाँ समाज में बड़ी विविधतायें हैं, वहाँ लोक-गीत और लोक-नृत्यों में

बड़ी एकता है। सदियों की गुलामी के कारण हमारे लोक नृत्य समाज में अपनी प्रतिष्ठा खो चुके थे, किन्तु स्वतन्त्रता के बाद से उन्हें नई प्रतिष्ठा मिली है। अब किसी सांस्कृतिक कार्यक्रम में शास्त्रीय संगीत के साथ हमें लोक संगीत (नृत्य और लोक गीत) भी मिलते हैं। नीचे हम भारत के कुछ प्रसिद्ध लोक नृत्यों का वर्णन करेंगे।

गरबा नृत्य

यह नृत्य गुजरात प्रान्त का एक लोक-प्रिय नृत्य है। इसमें केवल स्त्रियाँ सामूहिक रूप से नृत्य करती हैं। पुरुष भाग नहीं लेते। इसी तरह का नृत्य जो पुरुषों के लिए है, गरबी नृत्य कहलाता है।

आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से यह नृत्य गुजरात के, घर-घर में तथा गाँव-गाँव में आरंभ हो जाता है। शरद ऋतु की सुहावनी रात में ताली बजाती हुई स्त्रियों का नृत्य और साथ में गरबा गीत बड़ा सुहावना लगता है। उस दिन पूजा का एक घट 'गरबा का घट' सजाया जाता है, जो बहुत ही सुन्दर होता है। उसमें फूल-पत्तियाँ बनाई जाती हैं और

उसके बीच में घी का दीपक जलाया जाता है। इस घट को गरबी कहते हैं। प्रथम नवरात्र को घर-घर में 'गरबी' को सजाया जाता है। रात्रि के आठ-नौ बजे समस्त स्त्रियाँ अपने-अपने घर के कामों से निवृत्त होकर एक स्थान पर रखकर उसके चारों ओर एक गोल घेरा बनाती हैं। रात्रि में बहुत देर तक 'गरबा' नृत्य करती रहती हैं। इस मंडली की एक नायिका होती है। गीत की एक पंक्ति पहले वह गाती है और उसके पश्चात् अन्य स्त्रियाँ गाती हैं। नर्तक मंडली पहले एक ओर झुकती है और फिर दूसरी ओर। नर्तकियाँ पैर पटकने के साथ-साथ हाथों से ताली बजाती हैं। इस प्रकार यह कार्यक्रम घंटों चलता रहता है। नृत्य के साथ-साथ गीत भी गाये जाते हैं। साथ-साथ ढोलक भी बजाया जाता है। हाथों से ताली, पैरों की थाप, कंगना और झाँझ की झंकार ढोलक का साथ देती हैं। अब तो अनेक स्थानों पर आधुनिक वाद्य-यंत्र भी प्रयुक्त होते हैं। नृत्य के उपरान्त प्रसाद बाँटा जाता है, जिसे "सलहानी' कहते हैं। इसी प्रकार नौ दिनों तक यह नृत्य चलता रहता है। अंतिम दिन 'गरबी' घट नदी में विसर्जित कर दी जाती है। यह महाराष्ट्र के गोफा, उत्तर प्रदेश के रास और आंध्र के कौलाटम नृत्य से मिलता-जुलता है।

□

गरबी नृत्य

यह भी गुजरात का एक लोक नृत्य है। जिस प्रकार स्त्रियों के लिए गरबा है, उसी प्रकार वहाँ के पुरुषों के लिए गरबी नृत्य है। गरबा की भाँति गरबी भी देवी-पूजन के हेतु सम्पन्न किया जाता है, अंतर केवल यह है कि 'गरबा' को अन्य अवसरों पर भी किया जाता है और 'गरबी' को केवल नवरात्र के दिन। इसमें देवी का एक चित्र मध्य में रख दिया

जाता है और उसके पास एक जलता हुआ दीपक अथवा गीली मिट्टी में बोये गये जौ आदि रख दिये जाते हैं। नर्तक लोग इसके चारों ओर नृत्य करते हैं। नृत्य में ताल का कार्य ताली अथवा चुटकी से लिया जाता है। एक नर्तक गीत गाता है और दूसरे नर्तक उसे दुहराते हैं। वैसे तो गरबी के लिए विशेष रूप से गीत रचे गये हैं, पर प्रायः 'गरबा' में प्रयुक्त होने वाले गीतों को ही उसमें उपयोग कर लिया जाता है। 'गरबी' नृत्य प्रस्तुत करते समय पुरुष अपने गुजराती वेष-भूषा में रहते हैं। वे नीचे एक धोती पहनते हैं और ऊपर एक कुर्ता। कभी-कभी वे ऊपरी भाग को नग्न भी रखते हैं और केवल एक धोती पहनते हैं। 'गरबी' में मिट्टी के पात्रों का प्रयोग नहीं किया जाता।

□

भाँगड़ा नृत्य

पंजाब का भाँगड़ा नृत्य वीर प्रधान सामूहिक नृत्य है, अतः इसमें गति की प्रधानता रहती है। वर्तमान समय में यह पंजाब में बहुत लोकप्रिय है। ऐसे तो यह पुरुषों का नृत्य है, किंतु कभी-कभी स्त्रियाँ भी इसे करती हैं, किंतु पुरुषों और स्त्रियों का सम्मिलित नृत्य अधिक प्रचलित नहीं है। यह उल्लास और वीर भावना प्रदर्शक लोक-नृत्य है, अतः इस नृत्य का प्रदर्शन खुशी के अवसर पर किया जाता है। पुरुष नर्तक रंगीन लुंगी, ढीला कुर्ता, गले में माला, कामदार वासकेट तथा सिर पर छोटी सी पगड़ी बाँधते हैं। दोनों हाथों में दो चटक रंगों का रूमाल बाँध लेते हैं और सामूहिक नृत्य करते हैं। इसमें पैर और हाथों का ही संचालन विशेष रूप से होता है। मुख के भावों का कोई विशेष महत्व नहीं होता। लय धीमी गति से प्रारंभ होती है और क्रमशः तेज होती जाती है। जिस

समय लय तेज हो जाती है तो जोश और उत्साह में एक नर्तक दूसरे नर्तक के कंधों पर खड़ा हो जाता है और हाथ से लय देता रहता है। कभी-कभी दो-दो नर्तकों के कन्धे पर एक-एक खड़ा हो जाता है और सब मिल कर एक घेरा बना लेते हैं। हर समय हाथ या पैर से अथवा दोनों से लय देते रहते हैं। यह नृत्य काफी देर तक चलता रहता है। नगाड़ा अथवा ढोलक से संगति करते हैं। उसकी तेज आवाज से बड़ी समा बंध जाती है। बीच-बीच में चिल्लाते भी हैं अथवा लय के साथ सीटी बजाते हैं। इस प्रकार नृत्य काफी समय तक चलने के बाद उसकी गति अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर समाप्त होती है।

□

शिकारी नृत्य

यह एक लोकप्रिय नृत्य है। वास्तव में यह बंगाल और असम की पहाड़ी घाटियों के भीलों का एक लोक नृत्य है। अब सभ्य समाज में भी स्त्री-पुरुष अकेले अथवा सामूहिक रूप से इसे करने लगे हैं। कलाकार बड़ी सुन्दर वेश-भूषा पहनता है, जो बड़ा आकर्षक लगता है। नीचे

जानवर की खाल, गले में माला, कानों में बड़ी-बड़ी बालियाँ, सिर पर लाल रंग की पट्टी और उसमें चिड़ियों के रंग-बिरंगे पर खोसते हैं। पैरों में घुँघरू और एक हाथ में धनुष-बाण अथवा लम्बी नुकीली बर्छी और दूसरे हाथ में चमड़े की बनी हुई ढाल रहती है। ऊपर का शरीर नंगा रहता है।

नर्तक शिकार को खोजता हुआ रंग-मंच में प्रवेश करता है। उसके बाद कई एक वाद्य एक साथ बजाये जाते हैं। देखने वालों को ऐसा मालूम पड़ता कि मानो वह किसी शिकार की तलाश में घूम रहा हो। श्रम से थक कर वह मस्तक का पसीना पोंछता है। कभी शिकार को देख कर आनन्द का भाव प्रदर्शित करता है तो कभी शिकार के भाग जाने पर निराशा। कभी किसी शिकार को देखकर मारने को तैयार होता है तो कभी उस शिकार के भाग जाने पर बड़ा निराश होता है और वह मूर्छित होकर गिर पड़ता है। कुछ समय के बाद वह उठता है और फिर शिकार ढूंढ़ने का नृत्य करता है। दूसरी बार शिकार को मारने में सफल हो जाता है। अतः कुछ देर तक खुशी में वह नृत्य करता है। उसके बाद शिकार को रस्सी से बाँधने का अभिनय करता है और उसे घसीटकर ले जाता है। इसी के साथ यह नृत्य समाप्त होता है।

□

छपेली नृत्य

उत्तर प्रदेश के कुमायूं भू-भाग का यह नृत्य है। वहाँ के लोगों का सहृदय, सरलता, उल्लास, प्राकृतिक सुषमा तथा निश्चिन्तता का सुन्दर रूप इस नृत्य में देखने को मिलता है। इसमें कोई भेदभाव नहीं

मिलता है। यह नृत्य अक्सर त्योहारों, पर्वों और मेलों में जगह-जगह दिखलाई पड़ता है। इस नृत्य में दो नर्तक होते हैं। इसमें एक व्यक्ति स्त्री और दूसरा पुरुष होता है। उन्हीं के अनुरूप नृत्य का आयोजन होता है। इसमें हुँकार और बाँसुरी से संगति की जाती है। साथ-साथ मधुर कंठ से गायन भी होता रहता है। छपेली नृत्य खुशी का पवित्र नृत्य है जिसको देखने से दर्शक मंत्र-मुग्ध हो जाते हैं।

प्रश्न

१—शास्त्रीय और लोक नृत्य के कितने प्रकार आप जानते हैं? किसी एक प्रकार का वर्णन कीजिये।

२—भरतनाट्यम, मणिपुरी और कथकलि नृत्यों को विस्तार में समझाइये।

३—तांडव नृत्य की वेश-भूषा और प्रकार बताइये।

□

नाट्य, नृत्त और नृत्य

कलात्मक अंग-संचालन द्वारा भावों की अभिव्यक्ति अभिनय कहलाती है। इसे नाट्य भी कहते हैं। मानव सभ्यता के विकास में अंग-संचालन भाषा का प्रथम रूप था। जिस समय भाषा का जन्म नहीं हुआ था उस समय लोग अंग के विभिन्न क्रियाओं द्वारा अपने मन के भाव प्रकट करते रहे होंगे। अभिनय आँखों की भाषा है और साहित्य कानों की। नृत्य में दोनों प्रकार की भाषाओं का प्रयोग होता है।

अभिनय के तीन अंग माने जाते हैं—नाट्य, नृत्त और नृत्य। जब किसी का अनुकरण करते हैं अथवा किसी कथा के अनुसार अभिनय करते हैं तो उसे नाट्य कहते हैं। इसे रूपक भी कहते हैं क्योंकि यह आँखों द्वारा देखा जाता है। नाट्य में चारों प्रकार का अभिनय—आंगिक, वाचिक, सात्विक और आहार्य होता है। अभिनय के साथ-साथ संगीत भी चलता है। धनंजय ने ठीक ही कहा है कि—

"अवस्थानुकृतिनाट्यम रूप दृश्यम योच्यते।
रूपक तत्समारोपाद दशधैव रसाश्रयम्॥

अर्थात् अवस्था विशेष की अनुकृति को नाट्य कहते हैं। देखे जाने के कारण इसे रूपक कहते हैं। रस का आश्रय लेकर प्रदर्शित होने वाले नाट्य के दस भेद माने जाते हैं।

अभिनय का दूसरा अंग नृत्त है। इसमें अंगों की क्रिया एवं भाव-प्रदर्शन किसी अथ को व्यक्त करने के लिए नहीं, बल्कि सौंदर्य के लिए इसे किया जाता है। नृत्त की विशेषता यह है कि इससे अंग-संचालन और भाव-प्रदर्शन लय-ताल बद्ध रहता है। इसलिए कुछ विद्वान् ताल-बद्ध अंग-संचालन या पद-संचालन को नृत्त कहते हैं।

अभिनय का तीसरा अंग नृत्य है। इसमें भाव और लय दोनों का सुन्दर समन्वय है। नेत्र, मुख, भौं, हस्त आदि द्वारा भाव और पैर व शरीर के विभिन्न अंगों के संचालन द्वारा लय व्यक्त होता है। इसीलिए तो नृत्य, नाट्य और नृत्त दोनों से श्रेष्ठ है और कठिन भी। नृत्य में लय प्रधान होने के कारण यह संगीत का अंग हो जाता है तथा–'गीतम् वाद्यम् यथा नृत्यम् यतस्ताले प्रतिष्ठितम्।'

नाट्य और नृत्त में मुख्य अन्तर यह है कि नाट्य रस प्रधान है तो नृत्त भाव प्रधान। इसी प्रकार नृत्य, नृत्त में भेद यह है कि नृत्य में अंग सचालन लय पर आधारित होते हुए भी भाव प्रधान है, किन्तु नृत्त में यह भाव केवल सौन्दर्य-वर्धक है।

नृत्य का सम्बन्ध आंगिक अभिनय से है। शरीर के विभिन्न अंगों के संचालन से मुद्रा की सृष्टि होती है। जिस प्रकार साहित्य में वर्णमाला का महत्व है उसी प्रकार नृत्य में मुद्रा का महत्व है। भारतीय नृत्य में मुद्राओं के द्वारा ही भाव व्यक्त किया जाता है। नृत्य के सभी प्रकारों में भाव-प्रदर्शन का एक माध्यम मुद्रा है, किन्तु कथक नृत्य में तो इसका बड़ा महत्व है। आगे हम इस पर विस्तार में विचार करेंगे।

प्रश्न

१—नाट्य, नृत और नृत्य में क्या भेद है ? विस्तार में समझाइये।

कथक नृत्य का इतिहास

नृत्य का इतिहास बहुत प्राचीन है। मोहन जोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में प्राप्त नृत्य करती हुई मूर्तियाँ इसकी प्राचीनता सिद्ध करती हैं। वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों में नृत्य का उल्लेख मिलता है। मौर्य और गुप्त काल में भी नृत्य का उल्लेख मिलता है। कौटिल्य ने तो नृत्यकार को इतना महत्व दिया है कि उसने एक स्थान पर लिखा है कि नृत्य के साधकों को राज्याश्रय मिलना चाहिये। राज्य की ओर से उनकी सब व्यवस्था करा देनी चाहिये जिससे कि वे नृत्य-साधना ठीक प्रकार से कर सकें।

कथक नृत्य, जिसे कथक नटवरी नृत्य भी कहते हैं, उत्तर भारत का एक प्रचलित शास्त्रीय नृत्य है। ऐसे तो मणिपुरी, कथकलि और भरत-नाट्यम शास्त्रीय नृत्य कहलाते हैं और उत्तर भारत में इनका प्रचार भी है, किन्तु इनमें से कथक नृत्य उत्तर भारत में अधिक लोक-प्रिय है। 'कथक' शब्द कोई नवीन शब्द नहीं है। ब्रह्म महापुराण, महाभारत, नाट्यशास्त्र में कथक शब्द का उल्लेख हुआ है। वह व्यक्ति 'कथक' समझा जाता था 'जो लोकोपदेश के लिये अभिनय के माध्यम से कथा प्रस्तुत करे।' मोहन जोदड़ो और हड़प्पा की मूर्तियों से कथक नृत्य का ही आभास मिलता है। मुसलमानों के आने से कथक नृत्य की रूपरेखा में काफी परिवर्तन हुआ। इनके पूर्व का नृत्य जो समस्त भारत में प्रच-लित था भरतनाट्यम सा था। मुसलमानी राज्य स्थापित होने से नृत्य भगवान के मंदिरों से राजदरबारों में पहुँचा और उनमें भक्ति-भावना के स्थान पर शृंगारिकता आ गई। नृत्य का उद्देश्य ईश्वर उपासना न रहकर, राजाओं के मनोरंजन की वस्तु हो गई। दक्षिण की देवदासियों को और नृत्याचार्यों को राज दरबार में लाया गया और राजदरबार में उन्हें शराब का प्याला लेकर नृत्य करने को बाध्य किया गया। इसलिये

पैरों का सन्तुलन बनाये रखना आवश्यक हो गया, नहीं तो प्याला गिर कर टूट जाता। इसका परिणाम यह हुआ कि नर्तक का पूरा ध्यान उपासना और भाव-प्रदर्शन से हटकर शरीर के संतुलन मात्र पर चला गया और धीरे-धीरे यह नृत्य केवल पैरों का तमाशा मात्र रह गया। नर्तक की वेश-भूषा में भी काफी परिवर्तन हुआ। राधा-कृष्ण के पावन नृत्य में आध्यात्मिक भाव के स्थान पर शृंगारिक भावना आ गई जिससे राज-दरबारियों के कामवासना की तृप्ति होती थी। देवदासियों और वेश्याओं को नृत्याचार्यों द्वारा नृत्य सिखाया गया। अतः नृत्य धीरे-धीरे सभ्य समाज से दूर होने लगा और केवल मनोरंजन का साधन मात्र रह गया। कथक नृत्य का अलग शास्त्र बनाया गया। नृत्य के पारिभाषिक शब्द उर्दू के रख लिये गये, जैसे सलामी, आमद, रियाज़ इत्यादि।

मुगल-काल में राजाओं के बदलने से कभी तो संगीत को प्रोत्साहन मिला और कभी उसे दबाया गया। औरंगजेब के राज्य-काल में संगीत लगभग समाप्त सा हो गया था। अकबर के समय में संगीत को बहुत प्रोत्साहन मिला। स्वामी हरिदास, तानसेन, बैजूबावरा आदि उन्हीं के काल में थे। अन्तिम नवाब वाजिद अली शाह के समय में संगीत को नया जीवन मिला। उन्होंने संगीत को बहुत प्रोत्साहन दिया। उनको कथक नृत्य कम पसन्द था क्योंकि यह एकांकी नृत्य है। उन्हें सामूहिक नृत्य पसन्द था। कभी-कभी वे स्वयं स्त्रियों के बीच कृष्ण बनकर नाचने लगते थे। उन्होंने स्वयं संगीत की अच्छी शिक्षा ली और 'ललनपिया' के नाम से अनेक नवीन ठुमरियों की रचना भी की। वाजिद अलीशाह के गुरु ठाकुर प्रसाद थे जिनको उन्होंने गुरु-दक्षिणा के रूप में ६ पालकी भर कर रुपया दिया था। उनके समय से कथक नृत्य का विशेष प्रचार हुआ। कहते हैं कि स्व० ठाकुर प्रसाद ने इस नृत्य का नाम कथक नटवरी नृत्य रक्खा था।

आगे नृत्य के विभिन्न घरानों पर संक्षिप्त प्रकाश डाला जा रहा है—

लखनऊ घराना

लखनऊ घराने का प्रारम्भ श्री ईश्वरी प्रसाद से माना जाता है जो इलाहाबाद जिले के हण्डिया तहसील के निवासी थे। वे जाति के मिश्र ब्राह्मण थे। एक किंवदन्ती के अनुसार कहा जाता है कि उन्हें स्वप्न में कथक नटवरी नृत्य का पुनरुद्धार करने के लिये श्रीकृष्ण ने आदेश दिया उसी क्षण से वे इस कार्य में लग गये और अपने तीनों पुत्रों—अड़गूजी, खड़गू जी और तुलगू जी को नृत्य की शिक्षा दी और नृत्य का पुनरुद्धार करने के लिये आज्ञा दी। कहते हैं कि ईश्वरी प्रसाद की मृत्यु १०५ वर्ष की अवस्था में सर्प काटने से हुई थी। उनकी धर्म पत्नी उनके साथ सती हो गईं। पिता की मृत्यु से पुत्रों को बड़ा दुःख हुआ। अड़गू जी के तीन पुत्र हुये—प्रकाज जी, दयाल जी और हीरालाल जी, जिनको अड़गू जी ने नृत्य की अच्छी शिक्षा दी। उनकी मृत्यु के बाद उनके तीनों पुत्र लखनऊ आ गये। वहाँ प्रकाश जी नवाब आशिक उद्दौला के दरबारी नृत्यकार हो गये।

प्रकाश जी के ३ पुत्र हुये, दुर्गा प्रसाद, ठाकुर प्रसाद और मानजी। इन तीनों भाइयों ने नृत्य में बड़ी ख्याति प्राप्त की। हम पीछे बता चुके हैं कि ठाकुर प्रसाद नवाब वाजिद अली शाह के नृत्य गुरु थे। उनकी गणेश परण बहुत लोकप्रिय थी। उनकी मृत्यु सन् १८५६ ई० में हुई। दुर्गा प्रसाद के तीन पुत्र हुये—महाराज विन्दादीन, महाराज कालिका प्रसाद और भैरव प्रसाद जिन्हें नृत्य में बड़ी ख्याति मिली। प्रथम दोनों राम-लक्ष्मण के नाम से पुकारे जाते थे। कालिका बिंदादीन जो ठुमरी गायन में काफी प्रसिद्ध थे और सैकड़ों नवीन ठुमरियों की रचना की। उनकी विशेषता यह थी कि ठुमरी गाते थे और उसका भाव अंग-संचालनों द्वारा दिखलाते थे। इस प्रकार लखनऊ घराने में भाव-प्रदर्शन मुख्य हो गया। गौहरजान और जौहरबाई आदि प्रसिद्ध गायिकाओं ने बिंदादीन महाराज से ठुमरी की शिक्षा ली। बिंदादीन महाराज एक

कट्टर हिन्दू थे और मुसलमानों तथा वेश्याओं के साथ रहने पर भी उन्होंने अपना सात्विक हिन्दू जीवन नहीं छोड़ा। कालिका प्रसाद के तीन पुत्र हुये—जगन्नाथ प्रसाद जो अच्छन महाराज के नाम से प्रसिद्ध थे, बैजनाथ प्रसाद जो लच्छू महाराज के नाम से लोकप्रिय थे और शम्भू महाराज। इन तीनों बन्धुओं ने नृत्य-जगत में बड़ी क्रांति मचा दी।

अच्छन महाराज भाव, लय और ताल के पण्डित थे। आप कठिन से कठिन तालों में बड़ी आसानी से नृत्य करते थे। आप कुछ भारी शरीर के थे, किंतु आपके नृत्य पर इसका कोई असर नहीं पड़ता था। आपको लखनऊ शहर बड़ा प्रिय था। आपने अपने छोटे भाई शम्भू महाराज को भी नृत्य की शिक्षा दी। जिस समय शम्भू महाराज की अवस्था केवल ८ वर्ष की थी तो उनके चाचा और गुरु महाराज बिंदादीन की मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय बिन्दादीन ने शम्भू महाराज को नृत्य सिखलाने का भार अच्छन महाराज के ऊपर डाल दिया। शम्भू महाराज ने बनारस के उस्ताद रहीम खां से ठुमरी की शिक्षा ली और कुछ समय तक रामपुर स्टेट में अपने बड़े भाई अच्छन महाराज के पास रहे और नृत्य की शिक्षा ग्रहण की। इसके बाद शम्भू महाराज लखनऊ आ गये और नटवरी नृत्य के प्रचार में लग गये। अच्छन महाराज की मृत्यु १९५० में हुई। उनके एकमात्र पुत्र बृजमोहन नाथ हैं जो बिरजू महाराज के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये संगीत कला केन्द्र दिल्ली में कार्य कर रहे हैं। शम्भू महाराज की मृत्यु ४ नवम्बर १९७१ को हुई। लच्छू महाराज की मृत्यु कुछ दिनों पूर्व हुई है। शम्भू महाराज की चार सन्तानें हुई, जिनमें से एक पुत्री और एक पुत्र, कृष्ण मोहन नाथ जीवित हैं। श्रीमती सितारा देवी, गोपी कृष्ण, दमयन्ती जोशी आदि इसी घराने की प्रतिनिधि कलाकार हैं। इस घराने में पैरों से बोल और शरीर के विभिन्न अंगों के सुन्दर संचालन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। प्रायः छोटे-छोटे टुकड़े व तोड़े नाचे जाते हैं। गत भाव की तुलना में गत निकास पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

जयपुर घराना

इस घराने की स्थापना भान जी महाराज द्वारा आज से लगभग १५० वर्षों पूर्व हुई थी। आपको एक संत द्वारा शिव तांडव की शिक्षा मिली थी। भानुजी के प्रपौत्र कान्हूजी, जो शिव तांडव में बड़े निपुण थे वृन्दावन आकर नृत्य के अन्य पद्धतियों की शिक्षा ली। वहाँ पर आपने लास्य नृत्य में निपुणता प्राप्त की। कान्हूजी के प्रपौत्र हनुमान प्रसाद के तीन पुत्र मोहनलाल, चिरौंजीलाल तथा नारायण प्रसाद हुये। हनुमान प्रसाद के भाई हरि प्रसाद भी नृत्य में बड़े पारंगत थे। हरि प्रसाद आकाशचारी और चक्करदार परन में और हनुमान प्रसाद लास्य नृत्य में बड़े प्रवीण थे। हनुमान प्रसाद के चचेरे भाई चुन्नीलाल थे जिनके दो पुत्र जयलाल और सुंदर प्रसाद हुये। इन दोनों भाइयों ने अपने घराने के अतिरिक्त लखनऊ घराने के पंडित बिंदादीन से नृत्य की शिक्षा ली। इस प्रकार वे दोनों घरानों की शिक्षा में पारंगत हो गये। सुन्दरप्रसाद से रोशन कुमारी ने नृत्य की शिक्षा ली। पंडित जयलाल की मृत्यु सन् १९४८ में हुई। उनके पुत्र रामगोपाल की मृत्यु भी कुछ दिनों पूर्व हुई। सुंदर प्रसाद की मृत्यु २८ मई १९७० को दिल्ली में हुई। जयलाल की सुपुत्री श्रीमती जयकुमारी भी कथक नृत्य में बड़ी प्रवीण थीं। हनुमान प्रसाद के अन्य चचेरे भाई श्याम लाल, दुर्गा प्रसाद, गोवर्धनजी मुख्य थे जिन्होंने नृत्य में अच्छी ख्याति प्राप्त की। गोवर्धनजी के सुपुत्र खेम चन्द प्रकाश फिल्मों में संगीत-निर्देशन का कार्य कर रहे हैं।

हम ऊपर बता चुके हैं कि इस घराने का जन्म भानुजी द्वारा हुआ था जो तांडव नृत्य के उत्कृष्ट कलाकार थे। अतः इस घराने के नृत्य में तांडव नृत्य का बहुत प्रभाव पड़ा। इस नृत्य शैली में कठिन तालों में नृत्य करना, कठिन लयकारी दिखाना, तैयारी में कठिन से कठिन बोलों को निकालना, गत भाव आदि पर विशेष ध्यान देना मुख्य है। इसमें

भाव प्रदर्शन का स्थान अपेक्षाकृत गौंड़ है। रोशन कुमारी इस घराने की वर्तमान प्रमुख नर्तकी हैं। इस घराने में लखनऊ की ठुमरी की अपेक्षा भजन या गीत पर भाव दिखाते हैं।

बनारस घराना

इस घराने में बहुत कम नृत्य के कलाकार हैं। अतः इस घराने से लोग बहुत कम परिचित हैं। इस घराने की आत्मा जयपुर घराना है। कहते हैं कि जयपुर घराने के दूल्हाराम और गनेशी लाल बनारस चले आये और वहीं रहने लगे। इस प्रकार बनारस घराने का प्रारंभ हुआ। दूल्हाराम के तीन पुत्र हुये—बिहारीलाल, पूरनलाल और हीरालाल। दूल्हाराम के शिष्य गणेशी लाल के भी तीन पुत्र हुये—हनुमान प्रसाद, शिवलाल तथा गोपाल जी। ये लोग कथक नृत्य में बड़े निपुण थे और उन लोगों ने अपनी एक स्वतन्त्र शैली की रचना की। गोपाल जी के पुत्र कृष्ण कुमार इस घराने का प्रतिनिधित्व दिल्ली में कर रहे हैं।

इस शैली में नृत्य के बोलों की मौलिकता, हाव-भाव, तैयारी, स्पष्टता और सौन्दर्य पर विशेष ध्यान दिया जाता है। तबले अथवा पखावज के बोल नृत्य में नहीं प्रयोग करते। ततकार में एड़ी का प्रयोग अधिक करते हैं। गत निकास और तोड़े-टुकड़े कम प्रयोग करते हैं।

प्रश्न

१—कथक नृत्य का संक्षिप्त इतिहास लिखिए।

२—लखनऊ अथवा जयपुर घरानों का विवरण लिखिए। इन घरानों के आधुनिक प्रतिनिधियों के नाम और उनकी विशेषता बताइये।

तबला परिचय

संगीत के प्रत्येक विद्यार्थी को तबला की जानकारी रखना आवश्यक है, क्योंकि संगीत का प्रत्येक कार्यक्रम तालबद्ध होता है। नृत्य में तो लय-ताल का और भी महत्व है। इसलिए नीचें तबला के विषय में संक्षिप्त जानकारी दी जा रही है।

आधुनिक काल में गायन-वादन तथा नृत्य की संगति में तबले का प्रयोग होता है। तंबले के पूर्व पखावज से संगति होती थी। कुछ दिनों से तबले का स्वतन्त्र वादन भी लोकप्रिय हो गया है। नृत्य के साथ तबला-संगति आवश्यक है। मोटे तौर से तबले को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, दाहिना और बाँया। दाहिना को 'दाहिना तबला' भी कहते हैं और बाँया को 'डग्गा'। नीचे तबले के विभिन्न अंगों का वर्णन दिया जा रहा है—

दाहिना तबला के अंग

(१) **लकड़ी**—यह कटहल, आम, खैर, सागौन तथा विजयसाल की लकड़ी की होती है, जो अन्दर से खोखली होती है। इसकी आकृति गोल होती है। ऊपर की गोलाई कम और नीचे की ज्यादा होती हैं।

(२) **पूड़ी**—लकड़ी के मुँह पर मढ़े हुये पूरे चमड़े को पूड़ी कहते है। इसमें चाँटी, लव, स्याही और खाल, तबले का ऊपरी हिस्सा आता है। पूड़ी की तरह गोल होने के कारण ही शायद इसे पूड़ी कहा गया। बकरे के खाल की पूड़ी अच्छी बनती है।

(३) **गजरा**—पूड़ी के चारों ओर चमड़े का गुथा हुआ मोटा माला

होता है जिसे गजरा कहते हैं। इसमें १६ छिद्र होते हैं जिनमें से बद्धी निकलती है।

(४) चांटी—पूड़ी के किनारे-किनारे अंदर की तरफ लगी हुई पट्टी को चांटी कहते हैं।

(५) स्याही—पूड़ी के बीचोबीच गोल काले मसाले को स्याही कहते हैं। पतली स्याही से तबला ऊँचे स्वर में और मोटी स्याही से नीचे स्वर में बोलता है।
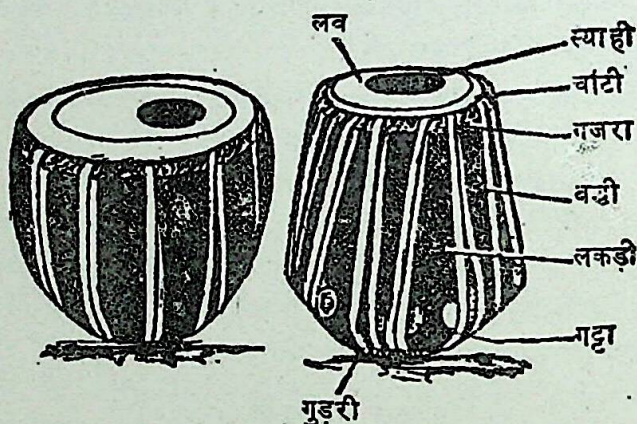
(६) लव—चांटी और स्याही के बीच खाली स्थान को लव अथवा मैदान कहते हैं।

(७) बद्धी—गट्टे के ऊपर रक्खी हुई चमड़े की लम्बी पट्टी को बद्धी कहते हैं। बद्धी से पूड़ी कसी रहती है और ऊपर-नीचे के गजरों में फँसी रहती है।

(८) गट्टा—लगभग ढाई इंच लम्बी लकड़ी के आठ गोले टुकड़े दाहिने तबले पर होते हैं, जिन्हें गट्टा कहते हैं। गट्टे बद्धी से दबे रहते हैं। गट्टों को नीचे खिसकाने से तबले का स्वर ऊपर चढ़ता है और ऊपर खिसकाने से नीचे जाता है।

(६) गुड़री—तबले की पेंदी में चमड़े का बना हुआ एक गजरा जिससे बद्धी कसी रहती है, गुड़री कहलाती है। गुड़री के सहारे तबला जमीन पर ठीक प्रकार से स्थित हो जाता है।

डग्गा अथवा बाँया के अंग

(१) कूड़ी—जिस प्रकार दाहिने तबले में लकड़ी पर पूड़ी कसी रहती है, उसी प्रकार बायें में कूड़ी के मुंह पर पूड़ी कसी रहती है। कूड़ी मिट्टी के अतिरिक्त लोहे अथवा लकड़ी की भी होती है। कूड़ी को डग्गा भी कहते हैं।

(२) पूड़ी—दाहिने के समान डग्गे की चांटी, लव और स्याही को पूड़ी के नाम से पुकारते हैं।

(३) चाँटी—पूड़ी के अन्दर की तरफ चारों ओर लगी हुई चमड़े की पट्टी को चाँटी कहते हैं।

(४) स्याही—पूड़ी में भी ऊपर की तरफ चन्द्राकार काली वस्तु होती है जिसे स्याही कहते हैं।

(५) लव - चाँटी और स्याही के बीच के स्थान को लव अथवा मैदान कहते हैं।

(६) गजरा—दाहिने के समान डग्गे में भी पूड़ी के चारों ओर चमड़े का बना हुआ माला होता है जिसे गजरा कहते हैं। गजरे पर ऊपर से आघात करने से बाँया कसता है और नीचे से आघात करने से ढीला होता है।

(७) डोरी—पूड़ी को कसने के लिए कुछ डग्गों में डोरी और अधिकांश में चमड़े की लम्बी पट्टी होती है। कुछ में डोरी कसने के लियें छल्ले लगे होते हैं।

(८) गुड़री—दाहिने के समान बायें की पेंदी में भी चमड़े की माला

होती है जिसे गुड़री कहते हैं। इसके सहारे डोरी फँसी रहती है और बाँया जमीन पर आसानी से स्थित हो जाता है।

तबले का जन्म

गायन, वादन तथा नृत्य के साथ संगति करने की परम्परा बहुत प्राचीन है। संगति में ताल-वाद्य महत्वपूर्ण है। समयानुसार ताल देने वाले वाद्यों का रूप बदलता रहा है। आधुनिक समय में यह कार्य तबला द्वारा होता है। इसके पूर्व मृदंग का प्रयोग होता था।

अधिकांश विद्वानों के मतानुसार तेरहवीं शताब्दी में अलाउद्दीन खिलजी के समय में अमीर खुसरो ने तबले का आविष्कार किया। मृदंग को बीच से दो भागों में विभाजित कर उसे तबला कहा। हाँ, इतना निश्चित है कि तबले को आधुनिक रूप देने के लिए उन्हें मृदंग के दोनों भागों में थोड़ा-बहुत परिवर्तन अवश्य करना पड़ा होगा। इस मत के अनुयायी यह प्रमाण देते हैं कि आज भी पंजाब में मृदंग के समान तबले के डग्गों में भी आटा लगाकर बजाने की प्रथा है। कुछ विद्वानों का यह मत है कि प्राचीन काल में प्रचलित 'दुर्दर' नामक वाद्य का आधुनिक रूप तबला है। कुछ विद्वानों का यह भी विचार है कि तबले की उत्पत्ति अरब के 'तब्ल' से हुई जिसे नक्कारा कहते हैं।

तबले का आविष्कार किसी भी काल में हुआ हो तथा आविष्कारक कोई भी रहा हो, किन्तु इतना तो निश्चित है कि दिल्ली के सिधार खाँ प्रथम तबलिये थे। उनके द्वारा दिल्ली घराने की नींव पड़ी और उनके शिष्यों ने तबला के अन्य घरानों की स्थापना की।

तबला मिलाना

दाहिने तबले को अधिक उतारने-चढ़ाने के लिए गट्टे को और थोड़ा उतारने-चढ़ाने के लिए गजरे को हथौड़ी से आघात करते हैं। तबले का स्वर चढ़ाने के लिए ऊपर से और उतारने के लिए नीचे से

आघात करते हैं। सर्वप्रथम दाहिने तबले को बजाकर सुनते हैं कि उसे चढ़ाने की जरूरत है या उतारने की। इसके बाद यह देखते हैं कि अधिक अन्तर है या कम। इतना समझने के बाद आवश्यकतानुसार उचित स्थान पर हथौड़ी से आघात करते हैं। तबला पर आघात करने की मुख्य दो रीतियाँ हैं—

(१) क्रमानुसार गट्टों पर आघात करते जाते हैं, जैसे—सर्वप्रथम पहले गट्टे पर और उसके बाद दूसरे, तीसरे, चौथे आदि पर।

(२) एक स्थान पर आघात करने के बाद उसके सामने के स्थान पर आघात करते हैं। बायें तबले में गट्टा नहीं होता, इसलिए उसके गजरे पर आघात करते हैं। जिन डग्गों में छल्ले होते हैं, उन्हें छल्लों से कसते हैं।

तबले का स्वर

तबले को सा, म अथवा प से मिलाते हैं। स्वर का चुनाव राग के अनुसार होता है। नृत्य के साथ सारंगी अथवा हारमोनियम पर जो लहरा बजाया जाता है, उसके स्वर के अनुसार तबला मिलाते हैं। जिन रागों में पंचम प्रयोग होता है, उनके साथ तबले को पंचम से मिलायेंगे, जिनमें शुद्ध म तथा प दोनों स्वर वर्ज्य हैं तो दाहिने तबले को षडज से मिलायेंगे। म और प के लिये कुछ बंधन अवश्य है, किन्तु सा के लिए कोई बंधन नहीं होता। प्रत्येक राग के साथ तबले को सा से मिलाया जा सकता है। आजकल श्रेष्ठ तबला-वादक नृत्य की संगति करने के लिये तबले को तार सा से मिलाते हैं। बड़े मुँह का तबला नीचे स्वर से और छोटे मुँह का तबला ऊँचे स्वर से सरलता से मिल जाता है।

तबला के घराने

हम पीछे बता चुके हैं कि सर्वप्रथम तबले का केवल एक घराना 'दिल्ली घराना' था और इस घराने के पहले तबलिये सिधार खाँ थे।

सिधार खाँ और उनके शिष्यों द्वारा दिल्ली घराने का निर्माण हुआ। दिल्ली घराने की वादन-शैली दिल्ली बाज कहलाई। कुछ दिनों के बाद तबला बजाने की कला दिल्ली से भारत के अन्य भागों में फैली। दिल्ली घराने के तबलिये भारत के दूसरे भागों में गये और वहाँ रहने लगे। वहाँ उन्होंने अपने कुछ शिष्यों को तबला बजाना सिखाया होगा, शिष्यों ने कुछ अपने शिष्य तैयार किये होंगे। इस प्रकार तबला बजाने की कला शिष्य परम्परा से आगे बढ़ती रही। फलस्वरूप थोड़ा-बहुत परिवर्तन होता रहा। इस प्रकार विभिन्न बाज और घरानों का जन्म हुआ।

तबले के मुख्य तीन घराने हैं—(१) पश्चिमी (२) पूर्वी और (३) पंजाब। पश्चिमी घराने में दिल्ली व अजराड़ा और पूर्वी घराने में लखनऊ, फरुखाबाद और बनारस घराने आते हैं। पंजाब बाज स्वतः एक घराना है। इन घरानों का विस्तृत वर्णन प्रो० हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव कृत 'वाद्य शास्त्र' में देखिये।

तबले के वर्ण

तबले पर बजाये जाने वाले जैसे—धा, धिं, धा, ता आदि तबले के वर्ण कहलाते हैं। वर्ण दस माने गये हैं। इनमें ६ वर्ण दाहिने तबले पर, दो बायें पर और दो दायें-बायें के संयोग से बजते हैं।

दाहिने पर—

(१) ता या ना, (२) तिं या ती, (३) तिं या थुं, (४) ते या ति, (५) तू (६) रे या टे वर्ण बजाये जाते हैं।

बायें पर—

(१) के, कि, क, कत्त और (२) घे या गे,

दायें-बायें के संयोग से—

(१) धा और (२) धि वर्ण निकलते हैं।

ताल के दस प्राण

कालो मार्गः क्रियांगानि ग्रहोजाति कला-लयाः ।

यति-प्रस्तार कश्येति ताल प्राणः दशस्मृतः ॥

अर्थात् काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति और प्रस्तार, ताल की ये दस विशेषतायें मानी गई हैं, जिन्हें प्राण कहते हैं। इनका प्रयोग प्राचीन संगीत में होता था। आजकल इनका प्रयोग उत्तर भारत में समाप्त सा हो गया है, किंतु कर्नाटक पद्धति में इनका प्रयोग आज भी होता है। अतः इनके विषय में जानकारी रखना आवश्यक है।

(१) **काल** - संगीत में समय को काल कहते हैं। व्यावहारिक सरलता के लिये काल को विभिन्न भागों में विभाजित कर दिया गया है, जैसे - मात्रा, विभाग, ताल, गीत की स्थायी, अन्तरा आदि।

(२) **मार्ग**—प्रथम मात्रा से अन्तिम मात्रा तक काल की चाल को मार्ग कहते हैं। इसमें ताली, खाली, विभाग और मात्रा की पारस्परिक दूरी आती है।

(३) **क्रिया**—हथेली पर ताल दिखाने की विधि को क्रिया कहते हैं। क्रियायें दो प्रकार की होती हैं, (१) जब हम ताली बजाते हैं, तो उसे सशब्द क्रिया कहते हैं और (२) जब ताली न देकर अँगुलियों को किसी ओर हिलाकर मात्रायें गिनते हैं, तो इस क्रिया को निशब्द क्रिया अथवा खाली दिखाना कहते हैं।

(४) अंग—कर्नाटक संगीत में समय के पैमाने को अंग कहते हैं। ये

६ होते हैं जो नीचे दिये ज़ा रहे हैं—

संख्या	नाम	चिन्ह	मात्रा
१	अणुद्रुत	‿	१
२	द्रुत	०	२
३	लघु	।	४
४	गुरू	8, या S	८
५	प्लुत	८, या ६	१२
६	काकपद	×	१६

(५) ग्रह—ताल के जिस मात्रा से गीत प्रारम्भ होता है वह स्थान ग्रह कहलाता है। ग्रह चार प्रकार के होते हैं—सम, विषम, अतीत और अनागत। (अ) समग्रह—जब ताल की पहली मात्रा से गीत शुरू होता तो वह स्थान समग्रह कहलाता है। उत्तर भारतीय संगीत में प्रत्येक ताल की पहली मात्रा सम कहलाती है, चाहे उस स्थान से गीत-प्रारम्भ हो अथवा न हो (ब) विषम ग्रह–जब कोई गीत-ताल की प्रथम मात्रा से प्रारंभ न हो और किसी दूसरी मात्रा से प्रारंभ हो तो वह स्थान अथवा मात्रा विषम ग्रह कहलाता है। (स) अतीत ग्रह—अतीत का शाब्दिक्र अर्थ है, बीता हुआ। इसलिए मुख्य सम के बाद, जिस स्थान पर गीत का सम आता है, अतीत ग्रह कहलाता है। (द) अनागत ग्रह—इसी प्रकार अनागत का शाब्दिक अर्थ है आने वाला, इसलिए मुख्य सम के पहले ही सम दिखाये जाने वाले स्थान को अनागत ग्रह कहते हैं। मुख्य सम नकली सम के बाद आता है।

(६) जाति—जाति से लघु की मात्राओं का बोध होता है। कर्नाटक ताल पद्धति में मुख्य तालें सात मानी गई हैं—ध्रुव, मठ, रूपक, झंप, त्रिपुट, अठ और एक। प्रत्येक ताल की ५–५ किस्में अर्थात् जातियाँ

होती हैं, चतस्त्र, तिस्त्र, मिश्र, खण्ड और संकीर्ण । हिन्दुस्तानी संगीत में जाति का दूसरा अर्थ लिया जाता है ।

(७) **कला**—तबला अथवा पखावज बजाने की विधि अथवा शैली को कला कहते हैं । वाद्य पर हाथ रखने का तरीका, बैठने का ढंग, विभिन्न बोलों को निकालने की रीति और उसका उपयोग आदि कला के अन्तर्गत आते हैं । कला के ही आधार पर तबला के विभिन्न घरानों का जन्म हुआ ।

(८) **लय**—समय की गति को-लय कहते हैं । लय के तीन प्रकार माने गये हैं, विलम्बित, मध्य और द्रुत ।

(९) **यति**—संगीत में समय नापने की रीति को यति कहते हैं । शास्त्रकारों ने पाँच प्रकार के यति बताये हैं, किंतु आजकल न तो उनका प्रयोग होता है और न उनका अर्थ ही स्पष्ट है ।

(१०) **प्रस्तार**—इसका अर्थ विस्तार होता है । किसी ताल को कायदे, पल्टे, रेले, टुकड़े आदि द्वारा विस्तार करने की क्रिया को प्रस्तार कहते हैं ।

प्रश्न

(१) तबले के विभिन्न अंगों के नाम और उनका उपयोग बताइये ।

(२) तबले को किस तरह मिलाते हैं ? तबले के कितने वर्ण माने गये हैं ? बताइये ।

ताल-लिपि

इन तालों में प्रयोग होने वाले चिन्ह भातखंडे पद्धति के हैं, जो इस प्रकार हैं—

× —सम।

० —खाली।

ताली के स्थान पर ताली की संख्या जैसे—२, ३, ४

धागे—एक मात्रा में दो।

धाघादिं—एक मात्रा में तीन।

तिरकिट—एक मात्रा में चार।

तालों का वर्णन

कहरवा ताल

इस ताल में ८ मात्रायें होती हैं। दो विभाग होते हैं, पहली मात्रा पर सम तथा पाँचवीं पर खाली है।

मात्रा—	१	२	३	४		५	६	७	८
बोल—	धा	गे	न	ति	|	न	क	धि	न
ताल—	×					०			

दादरा ताल

इसमें ६ मात्रायें होती हैं। ३-३ मात्राओं के कुल दो विभाग होते हैं। पहली मात्रा पर सम तथा चौथी मात्रा पर खाली होती है।

मात्रा—	१	२	३		४	५	६
बोल—	धा	धी	ना	|	धा	तू	ना
ताल—	×				०		

तेवरा ताल

इसमें ७ मात्रायें और ३ विभाग होते हैं, जो क्रमशः ३-२-२ मात्राओं के होते हैं। पहली मात्रा पर सम और चौथी तथा छठवीं मात्रा पर दूसरी और तीसरी तालियाँ पड़ती हैं। इसमें खाली नहीं होती।

मात्रा—१	२	३		४	५		६	७
बोल—धा	दिं	ता	|	तिट	कत	|	गदि	गन
ताल—×				२			३	

रूपक ताल

इसमें ७ मात्रायें और ३ विभाग होते हैं जो ३-२-२ मात्राओं के होते हैं। पहली मात्रा पर सम तथा ४थी व ६ठीं मात्राओं पर तालियाँ पड़ती हैं।

मात्रा—१	२	३		४	५		६	७
बोल—ती	ती	ना	|	धी	ना	|	धी	ना
ताल—×				२			३	

धुमाली ताल

इसमें ८ मात्रायें और ४ विभाग होते हैं जो २-२ मात्राओं के होते हैं। ३ तालियाँ और एक खाली मानी जाती है। पहली मात्रा पर सम तथा तीसरी और सातवीं मात्रा पर ताली पड़ती है और पाँचवी पर खाली है। धुमाली ताल को कहरवा का एक प्रकार माना जाता है।

मात्रा—१	२		३	४		५	६		७	८
बोल—धिं	धिं	|	धा	तिं	|	त्रक	धिं	|	धागे	त्रक
ताल—×			२			०			३	

झप ताल

इसमें १० मात्रायें होती हैं और ४ विभाग होते हैं। चारों विभाग क्रमशः २–३–२–३ मात्राओं के होते हैं। ३ ताली और एक खाली होती है। पहली मात्रा पर सम, तीसरी और आठवीं पर ताली तथा छठवीं मात्रा पर खाली मानी जाती है।

मात्रा—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
बोल—	धी	ना |	धी	धी	ना |	ती	ना |	धी	धी	ना
ताल—	×		२			०		३		

सूल ताल

इसमें १० मात्रायें होती हैं और ५ विभाग २–२ मात्राओं के होते हैं जिनमें ३ ताली और २ खाली पड़ती है। पहली मात्रा पर सम, ५वीं और सातवीं मात्राओं पर ताली, तीसरी और नवीं मात्रा पर खाली पड़ती है।

मात्रा—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
बोल—	धा	धा |	दिं	ता |	किट	धा |	किट	तक |	गदि	गन
ताल—	×		०		२		३		०	

एक ताल

इसमें १२ मात्रायें और ६ विभाग २–२ मात्राओं के होते हैं। पहली मात्रा पर सम, पाँचवी, नवीं और ग्यारहवीं मात्रा पर ताली तथा तीसरी और सातवीं मात्रा पर खाली मानी जाती है। इस तरह ४ ताली और २ खाली पड़ती है।

मात्रा—	१	२	३	४	५	६	७	८
बोल—	धिं	धिं |	धागे	तिरकिट |	तू	ना |	क	त्ता |
ताल—	×		०		२		०	

९	१०	११	१२
धागे	तिरकिट |	धी	ना
३		४	

चार ताल

इसमें १२ मात्रायें और ६ विभाग २-२ मात्राओं के होते हैं। पहली मात्रा पर सम और पाँचवी, नवीं व ग्यारहवीं मात्राओं पर ताली तथा तीसरी और सातवीं मात्रा पर खाली मानी जाती है। इस तरह चार ताली और दो खाली पड़ती है।

मात्रा—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
बोल—	धा	धा	दिं	ता	किट	धा	दिं	ता	किट	तक	गदि	गन
ताल—	×		०		२		०		३		४	

झूमरा ताल

इसमें १४ मात्रायें और ४ विभाग क्रमशः ३-४-३-४ मात्राओं के होते हैं। पहली पर सम, चौथी और ग्यारहवीं मात्रा पर ताली और आठवीं पर खाली पड़ती है।

मात्रा—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
बोल—	धि	-धा	तिरकिट	धि	धि	धागे	तिरकिट	तिं	-ता	तिरकिट
ताल—	×			२				०		

११	१२	१३	१४
धि	धि	धागे	तिरकिट
३			

धमार ताल

इस ताल में १४ मात्रायें होती हैं। ५-२-३-४ मात्राओं के ४ विभाग क्रमशः होते हैं। पहली, छठवीं और ग्यारहवीं पर ताली तथा आठवीं पर खाली पड़ती है।

मात्रा—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
बोल—	क	धि	ट	धि	ट	धा	–	ग	ति	ट	ति	ट	ता	–
ताल—	×					२		०			३			

दीपचन्दी ताल

इसमें १४ मात्रायें और ४ विभाग क्रमशः ३–४–३–४ मात्राओं के होते हैं। पहली मात्रा पर सम, चौथी और ग्यारहवीं मात्राओं पर ताली तथा आठवीं पर खाली पड़ती है। इस तरह २ तालियाँ और १ खाली पड़ती है। इसे चाचर ताल भी कहते हैं।

१	२	३		४	५	६	७		८	९	१०		११	१२	१३	१४
धा	धिं	—	|	धा	धा	तिं	—	|	ता	तिं	—	|	धा	धा	धिं	—
×				२					०				३			

आड़ा चारताल

इस ताल में १४ मात्रायें और ७ विभाग २–२ मात्राओं के होते हैं। पहली मात्रा पर सम, तीसरी, सातवीं और ग्यारहवीं मात्रा पर ताली तथा पाँचवीं, नवीं तथा तेरहवीं पर खाली पड़ती है। इस तरह चार ताली और तीन खाली पड़ती है।

१	२		३	४		५	६		७	८		९	१०		११	१२		१३	१४
धिं	धिं	|	ना	त्रक	|	तू	ना	|	कत्	ता	|	धी	धी	|	ना	धी	|	धी	ना
×			२			०			३			०			४			०	

जत ताल

इसमें १६ मात्रायें और ४-४ मात्राओं के ४ विभाग होते हैं। पहली पर सम, ५वीं, १३वीं पर तालीं और ९वीं पर खाली पड़ती है।

१	२	३	४		५	६	७	८		९	१०	११	१२		१३	१४	१५	१६
धा	–	धिं	—	|	धा	धा	तिं	—	|	ता	—	तिं	—	|	धा	धा	धिं	—
×					२					०					३			

तीनताल अथवा त्रिताल

इसमें १६ मात्रायें और ४ विभाग ४-४ मात्राओं के होते हैं जिनमें तीन ताली और एक खाली है। पहली मात्रा पर सम, ५वीं और १३वीं मात्राओं पर ताली तथा ९वीं पर खाली पड़ती है।

१	२	३	४		५	६	७	८		९	१०	११	१२		१३	१४	१५	१६
धा	धिं	धिं	धा	|	धा	धिं	धिं	धा	|	धा	तिं	तिं	ता	|	ता	धिं	धिं	धा
×					२					०					३			

तिलवाड़ा ताल

इसमें १६ मात्रायें होती हैं व ४ विभाग होते हैं। ३ ताली और एक खाली पड़ती है। पहली मात्रा पर सम, ५वीं और १३वीं पर ताली और ९वीं मात्रा पर खाली पड़ती है। यह तीन ताल का विलम्बित रूप है।

मात्रा—	१	२	३	४		५	६	७	८
बोल—	धा	तिरकिट	धिं	धिं	|	धा	धा	तिं	तिं
ताल—	×					२			

	९	१०	११	१२		१३	१४	१५	१६
|	ता	तिरकिट	धिं	धिं	|	धा	धा	धिं	धिं
	०					३			

प्रश्न

(१) दस मात्रा के तालों का परिचय व ठेका लिखिये। किसी एक की दुगुन भी लिखिये।

(२) निम्न तालों में अन्तर बताइये—

तीनताल-तिलवाड़ा, धमार-झूमरा, रूपक-तीवरा।

लयकारी

गाते-बजाते समय कोई न कोई लय अवश्य रहती है, जिसे विलंबित, मध्य या द्रुत कहते हैं। इसके अतिरिक्त थोड़े समय के लिए अन्य लय दिखाया करते हैं, जिन्हें लयकारी कहते हैं, जैसे-दुगुन, तिगुन, चौगुन आदि। नीचे इसके कुछ उदाहरण देखिये—

ठाह लय—जिस लय में एक मात्रा पर एक शब्द अथवा एक अंक बोला जाय उसे ठाह लय कहते हैं, जैसे—

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

दुगुन—ठाह की दुगुनी तेज लय को दुगुन कहते हैं। इसमें दो अंकों को एक चन्द्राकार में लिखते हैं, जैसे—

१ २ ‿ ३ ४ ‿ ५ ६ ‿ ७ ८ ‿

तिगुन—ठाह लय की एक मात्रा में ३ अंक या ३ शब्द बोलने से तिगुन की लयकारी होती है अर्थात् जिस प्रकार ठाह लय के एक मात्रा में एक अंक दिखाते हैं, उसी प्रकार तिगुन में एक मात्रा में ३ अंक दिखाते हैं। इसमें ३ अंकों को एक चन्द्रकार में लिखते हैं, जैसे—

१ २ ३ ‿ ४ ५ ६ ‿

चौगुन—इसी प्रकार ठाह लय की एक मात्रा में चार अंक या चार शब्द बोलने को चौगुन कहते हैं। इसमें चार अंकों को एक चन्द्राकार में लिखते हैं जैसे—

१ २ ३ ४ ‿ ५ ६ ७ ८ ‿

किसी ताल को दुगुन, तिगुन अथवा चौगुन लिखना

(अ) सर्वप्रथम उस ताल के प्रत्येक मात्रा को थोड़ी-थोड़ी दूर पर लिखेंगे, जैसे चारताल की दुगुन के लिए—

धा धा दिं ता किट धा दिं ता किट तक गदि गन

(ब) इसके पश्चात् अगर दुगुन लिखना है तो पीछे से आगे की ओर बढ़ते हुए दो मात्रा को, तिगुन लिखना है तो तीन मात्रा को और चौगुन लिखना है तो चार मात्रा को एक चन्द्राकार में लिख देंगे, उदाहरणार्थ चारताल की दुगुन देखिये—

धा धा दिं ता किट, धा दिं ता किट, तक गदि, गन

(स) इसके पश्चात् पीछे से मात्रा गिनना शुरू करेंगे। चारताल में १२ मात्रायें होती हैं, इसलिए गदि गन पर १२, किट तक पर ११, दिंता पर १०, किट, धा पर ६, दिंता पर ८ और धाधा पर ७ की संख्या लिखेंगे, जैसे—

७	८	६	१०	११	१२
धाधा	दिंता	किट, धा	दिंता	किटतक	गदिगन

इसका तात्पर्य यह हुआ कि चारताल की दुगुन ७वीं मात्रा से शुरू होगी। इसमें ७वीं मात्रा पर खाली, ६वीं मात्रा पर तीसरी और ११वीं मात्रा पर चौथी ताली पड़ती है। इसलिए ताली-खाली का चिन्ह भी लगा देंगे—

७	८	६	१०	११	१२
| धा धा	दिं ता |	किट, धा	दिं ता |	किट तक	गदि गन
०		३		४	

पीछे हमने चारताल के आवर्तन की दुगुन लिखा। अगर दो आवर्तनों की दुगुन लिखते तो लयकारी सम से प्रारम्भ होती क्योंकि दुगुन का अर्थ यह है कि एक आवर्तन में दो आवर्तन आवे। नीचे कुछ और उदाहरण देखिये—

चार ताल की तिगुन

१	२	३	४
धाधादिं	ता, किट,धा |	दिं,ता,किट	तक,गदि,गन |
×		०	
५	६	७	८
धाधादिं	ता,किट,धा |	दिं,ता,किट	तक,गदि,गन |
२		०	
९	१०	११	११
धाधादिं	ता,किट,धा |	दि,ता,किट	तक,गदि,गन |
३		४	

चारताल की चौगुन

१	२	३	४
धाधादिंता	किट,धा,दिं,ता |	किटतकगदिगन	धाधादिंता
×		०	
५	६	७	८
किट,धा,दिं,ता	किटतकगदिगन |	धाधादिंता	किट,धा,दिं,ता
२		०	
९	१०	१०	१२
किटतकगदिगन	धाधादिंता |	किट,धा,दिं,ता	किटतकगदिगन
३		४	

झपताल की दून

१	२		३	४	५		६	७	
धीना	धीधी	|	नाती	नाधी	धीना	|	धीना	धीधी	।
×			२				०		

८	९	१०	
नाती	नाधी	धीना	|
३			

झपताल की तिगुन

१	२		३	४	५	
धीनाधी	धीनाती	|	नाधीधी	ना,धीना	धीधीना	।
×			२			

६	७		८	९	१०	
तीनाधी	धीना,धी	|	नाधीधी	नातीना	धीधीना	।
०			३			

झपताल की चौगुन

१	२		३	४	५	
धीनाधीधी	नातीनाधी	|	धीना,धीना	धीधीनाती	नाधीधीना	|
×			२			

६	७		८	९	१०	
धीनाधीधी	नातीनाधी	|	धीना,धीना	धीधीनाती	नाधीधीना	|
०			३			

जीवनियाँ

बिन्दादीन महाराज

कथक नृत्य को जनता में उच्च स्थान दिलाने का श्रेय स्व० बिन्दादीन को प्राप्त होता है। आपने कथक नृत्य को, आवश्यकतानुसार संशोधित कर, जनता में प्रचार किया। आपका जन्म तहसील हँडिया, जिला इलाहाबाद के एक ग्राम में हुआ था। जन्म-समय के विषय में विद्वानों में मतभेद है, लेकिन सभी मतों में आपका जन्म सन् १८३० के आस-पास माना गया है। कुछ विद्वानों ने आपका जन्म सन् १८३८ माना है। आपका असली नाम वृन्दावन प्रसाद था। आपके पिता का नाम दुर्गा प्रसाद था।

बिन्दादीन तीन भाई थे। दूसरे भाई का नाम कालिका प्रसाद था। कालिका प्रसाद के तीन पुत्र हुए—अच्छन, लच्छू और शम्भू महाराज, और बिन्दादीन के कोई पुत्र न था। उन्होंने अपने भतीजे अच्छन महाराज को नृत्य की अच्छी शिक्षा दी।

महाराज बिन्दादीन को नृत्य की शिक्षा अपने पिता दुर्गा प्रसाद तथा चाचा ठाकुर प्रसाद से मिली थी। नौ वर्ष की अवस्था से वे नृत्य सीखने लगे और चार वर्षों तक केवल 'तिगदा दिगदिग' का अभ्यास करते रहे। प्रतिदिन बारह-बारह घन्टों तक अभ्यास करते। एक बार नवाब वाजिदअली शाह के दरबार में आपकी मुठभेड़ प्रसिद्ध पखावजी कोदऊ सिंह से हो गई। ठाकुर प्रसाद जो उनके दरबार में नियुक्त थे, बड़े चिंतित हुए कि कहीं ऐसा न हो कि बिन्दादीन की वजह से उनका सिर नीचा हो। एक ओर बारह वर्ष के बिन्दादीन और दूसरी ओर पखावज सम्राट कोदऊ सिंह। भगवान का नाम लेकर उन्होंने बिन्दादीन
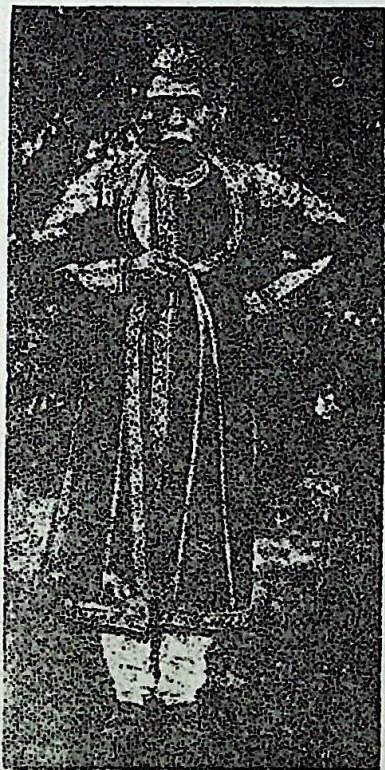
स्व० महाराज बिन्दादीन

को खड़ा कर दिया। सब लोग उनका नृत्य देखकर आश्चर्यचकित हो गये कि उनकी तैयारी कोदऊ सिंह से कम न थी। नवाब साहब आप से बहुत खुश हुए और प्रसन्न होकर बहुत-सा धन इनाम में दिया।

बड़े होकर बिन्दादीन महाराज ने बड़ा यश और धन कमाया। बिन्दादीन ठुमरी गायन में उतने ही प्रवीण थे जितना कि नृत्य में। उस समय की प्रसिद्ध गौहरजान और जोहराबाई ऐसी गायिकाओं ने आप से ठुमरी सीखी। कहते हैं कि आपने १५ सौ नवीन ठुमरियों की रचना की थी। जिस प्रकार गायक ठुमरी का भाव स्वरों द्वारा प्रदर्शित करते हैं उसी प्रकार वे अंगों के संचालन द्वारा ठुमरी का भाव दिखाते थे। आज भी उनकी ठुमरियाँ प्रचलित हैं। आपने अपने भतीजे स्व० अच्छन को नृत्य की अच्छी शिक्षा दी। आप अपना जीवन बड़ी सादगी से बिताते थे और चरित्र के बड़े पक्के थे। उस समय की तवायफों से घिरे रहने के बावजूद अपना सात्विक जीवन बनाये रक्खा।

सन् १८५७ में आप ठाकुर प्रसाद के साथ थोड़े दिनों के लिये लखनऊ से बाहर चले गये। उसके बाद नेपाल आदि स्थान गये। हर जगह आपका बड़ा स्वागत हुआ और पुरस्कार में बहुत-सा धन मिला। नृत्य करते समय अचकन, चूड़ीदार पायजामा और एक दुपल्ली टोपी पहनते थे। आप कृष्ण के परम भक्त थे। सन् १९१८ में आपकी मृत्यु हो गई। प्रत्येक नर्तक बड़े आदर के साथ आपका नाम लेता है।

□

अच्छन महाराज

स्व० अच्छन महाराज कालिका प्रसाद जी के तीन पुत्रों में सबसे बड़े थे। लच्छू और शम्भू महाराज आप से छोटे थे। आपका पूरा नाम जगन्नाथ प्रसाद था। बचपन का नाम अच्छे भैया से बिगड़ कर अच्छन महाराज पड़ गया। संगीत-जगत में इसी नाम से प्रसिद्ध थे। आपने भी अपने चाचा बिन्दादीन की तरह कथक नृत्य का प्रचार किया और यश कमाया। करीब १७-१८ वर्षों तक आप नवाब रामपुर के

दरबार में रहे। अच्छन महाराज बीसवीं सदी के नृत्य-सम्राट माने जाते थे। वे अंग-संचालन द्वारा बहुत ही सूक्ष्म बातें कह जाते थे जो शब्दों के द्वारा नहीं व्यक्त किया जा सकता था। कठिन से कठिन तालों पर भी नृत्य का बड़ा अच्छा प्रदर्शन किया करते थे और साथ ही साथ ताल और लय पर आपको पूरा अधिकार था। कठिन से कठिन लयकारी बड़ी सरलता से दिखाते थे। धमार, सूल, ब्रह्म, आड़ा चौताल सवारी आदि तालों पर घन्टों नृत्य किया करते थे। कृष्ण-माखन चोरी, मथुरा-गमन, कंस-वध, गोवर्धन-धारण तथा राधा-कृष्ण की प्रेंम लीला बड़ी सुन्दर ढंग से किया करते थे।

आपका स्वभाव बहुत ही सरल व क्रोध और गर्व रहित था। आपने नृत्य कला पर एक पुस्तक भी लिखी थी, किन्तु किसी ने उसे चुरा लिया। आपनें कृष्ण लीला सम्बन्धी बहुत से नृत्यों की रचना की। आपके रंग-मंच पर आते ही दर्शक आनन्दमग्न हो जाया करते थे। २९ मई १९५० को अच्छन महाराज स्वर्गवासी हो गये। आपकी मृत्यु से संगीत-जगत बड़ा दुखी हुआ। ठुमरी गाकर अथवा उर्दू की कोई शेर पढ़कर उसका भाव बताना आपकी विशेषता थी। जब सुकोमल स्त्री का भाव दिखाते थे तो ऐसा मालूम पड़ता था कि सचमुच कोई स्त्री ही सामने खड़ी हो। आपके योग्य पुत्र बिरजू महाराज आजकल कथक नृत्य कला में बेजोड़ माने जाते हैं।

□

शम्भू महाराज

नृत्य सम्राट शम्भू महाराज कथक नृत्य में अपना ही स्थान रखते थे। आप स्व० अच्छन महाराज के योग्य छोटे भाई थे। आपके पिता का नाम कालिका प्रसाद था जो कि बिन्दादीन महाराज के छोटे भाई थे, लखनऊ घराने के आप सम्मानीय नर्तक थे जो जीवन के अन्तिम दिनों तक संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली में कार्य करते रहे। भारत के श्रेष्ठ कथक नर्तकों को ही आपसे सीखने का सौभाग्य मिला।
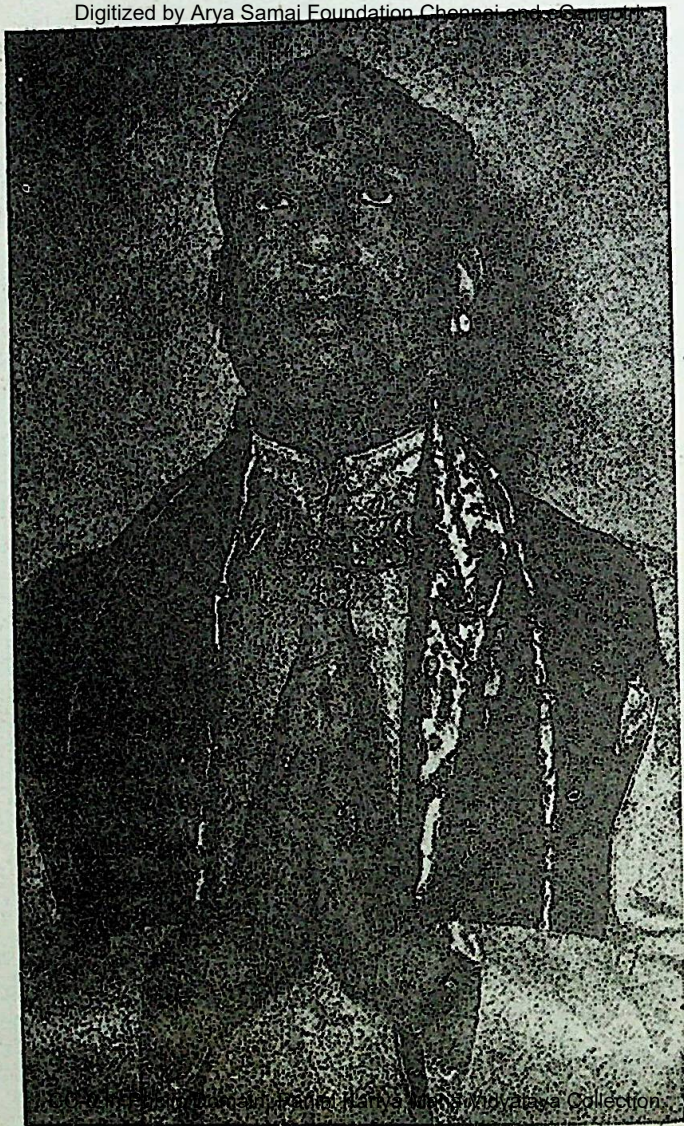
शम्भू महाराज

आपका कहना था कि नृत्य हमेशा भाव-प्रधान होना चाहिये, लय-प्रधान नहीं, क्योंकि बिना भाव के नृत्य बेजान सा हो जाता है और केवल लय-ताल प्रधान नृत्य, नृत्य न होकर चमत्कार मात्र रह जाता है। आपको भावों का राजा कहा जाता था। आप शोक, आशा, निराशा, क्रोध, प्रेम, घृणा आदि भावों का सफल प्रदर्शन करते थे। शम्भू महाराज को बहुत से पुराने बोल, परण तथा टुकड़े आदि याद थे। आप आजकल की सरल तथा गलत नृत्य शिक्षा से बहुत घृणा करते थे। इसी कारण जहाँ भी जाते, दर्शकों अथवा विद्यार्थियों के समक्ष सही नृत्य प्रस्तुत करते हुए प्रचलित नृत्य की बुराइयों को बताते थे। आप नृत्य के साथ-साथ ठुमरी गायन में भी बड़े प्रवीण थे। आपने ठुमरी की शिक्षा बनारस के प्रसिद्ध गायक रहीमुद्दीन खाँ से प्राप्त की थी। आप बैठे-बैठे ठुमरी गाते और उसके बाद उसके भावों को अंग-संचालन द्वारा ऐसा व्यक्त करते कि दर्शक मंत्र-मुग्ध हो जाते। आँखों द्वारा पता नहीं क्या-क्या कह देते। आपको नृत्य सम्राट, अभिनय चक्रवर्ती, पद्मश्री तथा प्रेसीडेन्ट-अवार्ड भी प्राप्त हुआ था।

आपकी चार संतानें हुईं, जिनमें से दो की बचपन में ही मृत्यु हो गई। केवल एक पुत्र कृष्ण मोहन नाथ और एक पुत्री रामेश्वरी जीवित हैं। २९ मई सन् १९५० को आपके पूज्य भाई और गुरु अच्छन महाराज की मृत्यु होने से आपको बड़ा दुःख हुआ, किन्तु विधाता को उतने पर भी संतोष न हुआ। उसके दूसरे दिन ५ बजे सायं शम्भू महाराज की पाँच वर्षीया पुत्री और तीसरे दिन एक वर्षीय पुत्र चल बसा। समय बीतने के साथ-साथ आप पुनः साधारण अवस्था में आ गये। इसके पूर्व आपकी आर्थिक हालत बहुत खराब थी, किंतु बाद में दिल्ली के संगीत नाटक अकादमी में नियुक्त हो जाने के कारण आपकी स्थिति सन्तोषजनक हो गई। वहाँ नृत्य की शिक्षा दे ही रहे थे कि थोड़ी सी ही अस्वस्थता के बाद आपकी मृत्यु दिनांक ४ नवम्बर १९७० को हो गई।

उदय शंकर

आपका जन्म सन् १८७५ में उदयपुर में हुआ था। शायद इसलिये उदय शंकर नाम रक्खा गया। बाल्यकाल से ही आप बहुत कला-प्रेमी थे। आपके पिता डा० श्याम शंकर चौधरी थे जो एक उच्च बंगाली ब्राह्मण थे। बचपन से ही आपको चित्रकारी तथा संगीत से काफी रुचि थी। आपकी इस रुचि को देखकर आपके पिता ने बम्बई के जे० जे० स्कूल आफ आर्टस में शिक्षा के लिये भेज दिया। इसी बीच बम्बई के गांधर्व विद्यालय में संगीत की शिक्षा भी लेते रहे। वहाँ की शिक्षा लेने के बाद आपको लन्दन के रायल स्कूल आफ आर्ट्स में भरती कर दिया गया। वहाँ चित्रकला में विशेष योग्यता भी प्राप्त की और आपको दो पदक भी मिले।

आप अक्सर मित्रों के जलसों में नृत्य-प्रदर्शन किया करते थे। इसी बीच आपकी भेंट रूस की प्रसिद्ध बैले नर्तकी अन्ना पावलोआ से हुई। उनके साथ संसार के बड़े-बड़े देशों में भ्रमण करते हुये आपने कुशल नृत्य का प्रदर्शन किया जिससे आपको काफी ख्याति तथा धन भी मिला। कुछ दिनों के बाद अपना निजी दल बनाकर विदेश घूमते रहे। विदेश से वापस आने पर अल्मोड़ा में आपने 'उदय शंकर इन्डियन कल्चर' नाम से एक नृत्य स्कूल चलाया। वहाँ आपके कथकलि गुरू शंकरम नम्बूदरीपाद तथा अलाउद्दीन खाँ भी शिक्षा देते रहे। कुछ दिनों के बाद वह स्कूल बन्द हो गया। आपने खंडापा पिल्लई से भरत-नाट्यम की शिक्षा ली।

आपका स्वभाव बहुत ही सरल तथा मिलनसार था। रहन-सहन में सादगी थी। आपको कई भाषाओं का ज्ञान था। आपने कई बार नृत्य-मन्डली लेकर विदेश भ्रमण किया। दुनियाँ के बड़े-बड़े शहरों में अपना कार्यक्रम देकर आपने भारतीय नृत्य की प्रतिष्ठा बढ़ाई। आपने 'बैले नृत्य' में भी प्रवीणता हासिल की थी, जो भारत के लिए नवीन शैली थी। आपकी मृत्यु कलकत्ता में २६ सितम्बर १९७७ को हुई।

पं० उदय शंकर और श्रीमती अमला शंकर

श्रीमती रुक्मणी अरुण्डेल

आपका जन्म दक्षिण भारत के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में हुआ। आपके पिता का नाम श्री नीलकण्ठ शास्त्री था जो कि मद्रास प्रांत के चिवसनुलर स्थान के रहने वाले थे। वे संस्कृत के पंडित तथा सरकारी इन्जीनियर थे। सन् १९२० में आपका विवाह श्री जे० एस० अरुन्डेल से हुआ। सन् १९२४ से आपने विदेश यात्रा शुरू की। आस्ट्रेलिया में आपकी मुलाकात विश्वविख्यात रूसी नर्तकी अन्नापावलोआ से हुई। उनसे आपको काफी प्रोत्साहन मिला और आपके हृदय में एक सफल नर्तकी बनने की अभिलाषा हुई। आपका सारा समय १९२४ से १९३६ तक विदेश भ्रमण में बीता।

विदेश से लौटने पर सौभाग्य से आपको श्री मीनाक्षी सुन्दरम् पिल्लई का नृत्य देखने को मिला। उनकी नृत्य से आप बड़ी प्रभावित हुईं और उनकी शिष्या हो गईं। बड़े परिश्रम और लगन से आपने भरतनाट्यम् की शिक्षा ग्रहण की। उसके बाद आपने सुप्रसिद्ध नर्तकी ब्रह्माश्वी पापनाशन शिवम से भी भरतनाट्यम की शिक्षा ली।

सन् १९२६ में आडियर में स्थापित इन्टरनेशनल ऐकेडमी आफ आर्ट्स की अध्यक्षा चुनी गईं। सन् १९३६ में आपने दक्षिण भारत का भ्रमण किया और नृत्य का प्रचार किया। रुक्मिणी जी के नृत्य भारतीय आदर्शों पर आधारित हैं तथा आध्यात्मिक होते हैं। सन् १९५६ में तत्कालीन राष्ट्रपति स्व० डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने आपको 'पद्मभूषण' की उपाधि से विभूषित किया।

भरतनाट्यम नृत्य सदा ही उनका ऋणी रहेगा। यह नाम उन्हीं का दिया हुआ है जो सर्वमान्य हो गया। पहले इस नृत्य का नाम दासी, अट्टम, अर्थात् देवदासियों का नृत्य अथवा तन्जोर नृत्य था। उन्होंने इसका नाम बदला और इसके वेश-भूषा में आवश्यक सुधार किया।

श्रीमती सितारा देवी

आपका जन्म कलकत्ते में हुआ। आपके पिता का नाम श्री सुखदेव सहाय था जो स्वयं कथक नृत्य के उत्कृष्ट कलाकार थे। बचपन से ही सितारा को नृत्य कला से बहुत प्रेम था। लगभग १२ वर्ष की अवस्था से आपने नृत्य सम्राट शम्भू महाराज से शिक्षा लेनी शुरू की। शीघ्र ही कथक नृत्य की एक अच्छी कलाकार हो गईं और उसके बाद भरत-नाट्यम और मणिपुरी नृत्य सीखकर उसमें पारंगत हुईं। प्रारम्भ में आपकी इच्छा कुशल अभिनेत्री बनने की थी और कई फिल्मों में काम भी किया और उन्हें सफलता मिली। भारतीय चलचित्रों में भी आपको काफी प्रसिद्धि मिल चुकी है और कई चलचित्रों में आपने नृत्य के साथ अभिनय भी किया है, किन्तु अब फिल्मों में काम करना बन्द कर दिया है।

आपने विदेशों का भ्रमण करते हुए अनेक स्थानों पर भारतीय नृत्य का प्रदर्शन किया और विदेशियों का ध्यान भारतीय नृत्य की ओर आकर्षित किया। भारतीय नृत्य के अतिरिक्त सितारा देवी पाश्चात्य नृत्य में भी काफी दिलचस्पी लेती रही हैं। अब देश के विभिन्न भागों में आयोजित संगीत-सम्मेलनों में शास्त्रीय नृत्य का प्रदर्शन करती हैं। राम और कृष्ण की लीला का अभिनय आप बड़ी कुशलता से करती हैं। सम्पूर्ण रामायण का पूरा अभिनय अकेले ही सफलतापूर्वक दिखाती हैं। सन् १९६९ में आपको संगीत नाटक अकादमी द्वारा पुरस्कार मिला और सन् १९७२ में पद्मश्री से अलंकृत की गईं।

दमयन्ती जोशी

आपका जन्म बम्बई के एक साधारण परिवार में ५ दिसम्बर सन् १९२८ को हुआ। एक वर्ष के बाद ही आपके पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण आपकी माँ ने आपका लालन-पालन बड़ी कठिनाइयों

श्रीमती सितारा देवी

सुश्री दमयन्ती जोशी

को झेलते हुए किया। बचपन से ही आपका झुकाव नृत्य की ओर देख-कर आपकी माँ ने कथक नृत्य के एक नृत्य शिक्षक श्री सीताराम प्रसाद से शिक्षा दिलानी शुरू की। बड़ी लगन से नृत्य शिक्षा ग्रहण की। कुछ दिनों के बाद प्रसिद्ध नर्तकी मेनका देवी के साथ विदेश भ्रमण किया और विदेशों में काफी ख्याति प्राप्त की। विदेश से लौटने पर आपने नृत्यकी विशेष उच्च शिक्षा अच्छन महाराज, शम्भू महाराज और लच्छू महाराज से ली। आपने कथक, भरतनाट्यम, कथकलि, मणिपुरी और पाश्चात्य नृत्य में भी दक्षता प्राप्त की।

भारत सरकार की ओर से चीन, जापान आदि देशों में सांस्कृतिक मंडल के साथ भेजी गईं जहाँ भारतीय नृत्य का प्रदर्शन दिया। वहाँ पर कथक और मणिपुरी नृत्यों को बहुत पसन्द किया गया। भारत के अच्छे-अच्छे संगीत सम्मेलनों में आप अपनी कला का प्रदर्शन दे चुकी हैं। आप नृत्य की शुद्धता पर अधिक विश्वास रखती हैं। लय-ताल के चमत्कार की अपेक्षा भावात्मक नृत्य को आप अधिक अच्छा समझती हैं।

□

बिरजू महाराज

आप लखनऊ घराने के सुप्रसिद्ध नर्तक स्व० पं० अच्छन महाराज के सुयोग्य पुत्र हैं। ऐसे तो आप बिरजू महाराज के नाम से प्रसिद्ध हैं, किंतु आपका पूरा नाम श्री ब्रजमोहन दास है। आपको नृत्य सीखने की प्रेरणा अपने पिता से मिली। घर का वातावरण भी नृत्यमय था। रूढ़ि-गत परम्परा के अनुसार आपने अपने पिता से गन्डा बँधवाया, किन्तु दुर्भाग्यवश जब केवल दस वर्ष के ही थे तभी आपके पिता की मृत्यु हो गई। उसके बाद आप अपने चाचा लच्छू महाराज और शम्भू महाराज

से नृत्य की शिक्षा लेने लगे। सात वर्ष की अवस्था में देहरादून में आपने नृत्य का प्रथम प्रदर्शन दिया, जो जनता द्वारा बहुत पसन्द किया गया।

पिता की मृत्यु के बाद आपको अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और उदर-पूर्ति के लिए कार्य भी करना पड़ा, किंतु इन सब मुसीबतों के होते हुये भी आप में नृत्यकार बनने की इच्छा बड़ी प्रबल थी। जब कभी आप चलचित्र देखते तो उसी प्रकार नृत्य करने की इच्छा मन में होती। कुछ दिनों के परिश्रम के बाद आपको दिल्ली में 'संगीत भारती' नामक संस्था में शिक्षक का कार्य मिला। दिल्ली में ही आपने कुछ नृत्य नाटकों की बड़े परिश्रम से रचना की, किंतु सफल न हो सके। अतः अपने घर लखनऊ चले गये। बाद में अपने चाचा के सहयोग से दिल्ली में कुमार सम्भव, फाग लीला, गोवर्धन लीला, मालती माधव और शाने अवध की रचना की और नृत्य नाट्य प्रस्तुत किये जो जनता द्वारा काफी प्रशंसनीय रहे।

आपका स्वभाव बहुत ही सरल और मृदु है। आप बहुत ही मिलनसार हैं तथा दूसरों के प्रति दया की भावना रखते हैं। आपने विदेशों का भी भ्रमण किया और वहाँ पर आपको काफी सफलता और ख्याति भी मिली। भारत के सभी अच्छे संगीत-सम्मेलनों में आप नृत्य प्रस्तुत कर चुके हैं जो जनता द्वारा काफी सराहे गये। आप कथक नृत्य के एक श्रेष्ठ कलाकार हैं। कथक नृत्य का मानव-स्वभाव से घनिष्ट संबंध है और नृत्य में लय-ताल, गत, भाव और अभिनय सब अपनी-अपनी जगह पर बराबर से महत्व रखते हैं, ऐसा आपका विचार है। आप कथक नृत्य में पारंगत होते हुए भी ठुमरी-गायन तथा तबला-मृदंग-वादन में भी काफी कुशल हैं और इन सब पर आपका बराबर अधिकार है। आप इस समय भारत में एक श्रेष्ठ कथक नृत्य कलाकार के रूप में नृत्य-साधना कर रहे हैं और आपसे संगीत जगत को काफी आशा है। आजकल आप संगीत कला केन्द्र, दिल्ली में नियुक्त हैं। आपके बिना

कथक नृत्य की मुद्रा में बिरजू महाराज

कथक नृत्य की मुद्रा में पं० गोपी कृष्ण

कोई भी संगीत-सम्मेलन अथवा नृत्य कार्यक्रम फीका लगता है। इतनी योग्यता और ख्याति पाने पर भी आपका स्वभाव सरल, निराभिमान और मिलनसार है।

□

गोपी कृष्ण

आपका जन्म २२ अगस्त सन् १९३३ को कलकत्ते में हुआ था। आपके नाना पं० सुखदेव सहाय संगीत के बड़े विद्वान् थे। आपकी मौसी नर्तकी सितारा देवी तथा गायिका तारा हैं। आपको 'झनक-झनक पायल बाजे' चलचित्र में नृत्य करने से तत्काल प्रसिद्धि प्राप्त हुई। आपने बचपन से ही नृत्य की शिक्षा लेनी शुरू की थी। आपने पहले अपने नाना सुखदेव जी और उसके बाद शम्भू महाराज से नृत्य की शिक्षा ली। आप भरतनाट्यम और मणिपुरी नृत्य में भी कुशल हैं। भरतनाट्यम नृत्य की शिक्षा गोविन्द राज पिल्लई से ग्रहण की।

बचपन से बम्बई में रहकर आपने स्कूली शिक्षा प्राप्त की और उसके बाद व्यावसायिक जीवन प्रारंभ किया। 'झनक-झनक पायल बाजे' चित्र में अभिनय करने के बाद ही आपकी ख्याति भारत में बिजली सी फैल गई। इसके बाद आपने देश का भ्रमण करते हुये जगह-जगह पर अपने नृत्य का प्रदर्शन दिया, जिसे जनता ने काफी सराहा।

आजकल आप बम्बई में रहकर चलचित्रों में नृत्य निर्देशन का कार्य सुचारु रूप से कर रहे हैं। आपके अन्य दो भाई हैं—पांडे और चौबे। आप लकीर के फकीर नहीं हैं, अतः आप पुरानी बातों में विश्वास कम रखते हैं, इसलिए कथक नृत्य में आप हमेशा नवीनता की खोज में रहते हैं।

भरतनाट्यम नृत्य की मुद्रा में
श्रीमती वैजन्ती माला

वैजन्ती माला

आप चलचित्र जगत की एक प्रसिद्ध अभिनेत्री तथा भरतनाट्यम शैली की कुशल नर्तकी हैं। आप दक्षिण भारत की मशहूर नर्तकी वसुन्धरा देवी की पुत्री हैं। आपको नृत्य कला की प्रेरणा बचपन में मिली और इसका श्रेय आपकी माँ को है।

सन् १९५० ई० में वैजन्ती माला अपनी एक ट्रूप लेकर विदेश गईं और इंगलैंड में आपने नृत्य का प्रदर्शन दिया। वहाँ आपको काफी ख्याति मिली। इटली में आपके नृत्य की जो सराहना हुई उससे आपकी प्रसिद्धि में चार चांद लग गये। विदेशों का भ्रमण करती हुई अपने नृत्य की कला कौशल का प्रदर्शन करती रहती थीं। विदेशों से जब कभी कोई विशिष्ट दल भारतवर्ष आता था तो उस समय आपका नृत्य उनके समक्ष प्रस्तुत किया जाता था।

आप बम्बई के चलचित्रों में इतनी व्यस्त रहती थीं कि बड़ी मुश्किल से किसी संगीत-सम्मेलन में बाहर जा पाती थीं, किन्तु जहाँ भी जाती थीं वहाँ सस्ते किस्म की नृत्य नहीं दिखातीं बल्कि शास्त्रीय नृत्य प्रस्तुत करती थीं। अब कुछ दिनों से नृत्य करना बन्द कर दिया है। डा० बाली से शादी करने के बाद से फिल्मों में अभिनय करना भी बन्द कर दिया है। अब गृहस्थ जीवन बिता रही हैं। सन् १९८४-८५ के आम चुनाव में दक्षिण भारत से एम० पी० (पार्लियामेन्ट सदस्या) भी चुनी गईं।

□

सुन्दर प्रसाद

पं० सुन्दर प्रसाद जयपुर घराने के प्रसिद्ध एवं विद्वान् नर्तक थे। आपके पिता का नाम चुन्नी लाल था। आपके भाई जयलाल भी एक प्रकांड पंडित थे। पंडित सुन्दर प्रसाद की मृत्यु २८ मई सन् १९७० को

दिल्ली में ८० वर्ष की अवस्था में हुई। मृत्यु के पूर्व आप कुछ समय के लिये कैन्सर रोग से पीड़ित थे।

पं० सुन्दर प्रसाद को नृत्य की शिक्षा अपने पिता चुन्नी लाल तथा चाचा दुर्गा प्रसाद से प्राप्त हुई। इनके अतिरिक्त लखनऊ घराने के प्रसिद्ध गुरू बिंदादीन महाराज से भी शिक्षा ग्रहण की। इस प्रकार आप में लखनऊ और जयपुर दोनों घरानों की विशेषतायें मौजूद थीं।

सन् १९५९ में संगीत नाटक अकादमी दिल्ली द्वारा आपको 'पद्म-श्री' की उपाधि से विभूषित किया गया। आप संगीत नाटक अकादमी के 'फैलो' भी थे। उम्र बढ़ने पर आपका शरीर स्थूलकाय हो गया था, किन्तु फिर भी बड़ी कुशलता से अपना नृत्य दिखाते थे। अनेक लोगों ने आपसे शिक्षा प्राप्त की। प्रसिद्ध नर्तकी रोशन कुमारी आपकी शिष्या हैं। प्रिया प्रवार, उमा शर्मा, कुमुदिनी लखिया, सोहनलाल, हीरालाल, मोहनलाल, कल्याणपुरकर आदि आपकी मुख्य शिष्य-शिष्यायें हैं। पिछले १५ वर्षों से वे 'भारतीय कला केन्द्र' दिल्ली में नृत्य की शिक्षा दे रहे थे। पं० सुन्दर प्रसाद की एक भी सन्तान जीवित नहीं हैं।

□

जयलाल

स्व० पंडित जय लाल जयपुर घराने के स्तम्भ थे। वे पं० चुन्नीलाल के सुपुत्र थे। उन्होंने अपने पिता के अतिरिक्त अपने चाचा दुर्गा प्रसाद से भी संगीत शिक्षा ग्रहण की थी। उनकी मृत्यु सन् १९४९ में हुई। पं० जय लाल केवल एक अच्छे नर्तक ही नहीं थे, बल्कि एक अच्छे तबला वादक भी थे। उन्हें तबले की बहुत सी चीजें याद थीं। उनके एकमात्र पुत्र रामगोपाल और एक पुत्री जयकुमारी थीं। रामगोपाल अन्त तक कलकत्ता में नृत्य की शिक्षा दे रहे थे। जयकुमारी भी एक अच्छी और विद्वान् नर्तकी थीं। दोनों की मृत्यु कुछ दिनों पूर्व हुई।

पंडित जयलाल का जन्म सन् १८८५ में तथा मृत्यु सन् १९४९ में
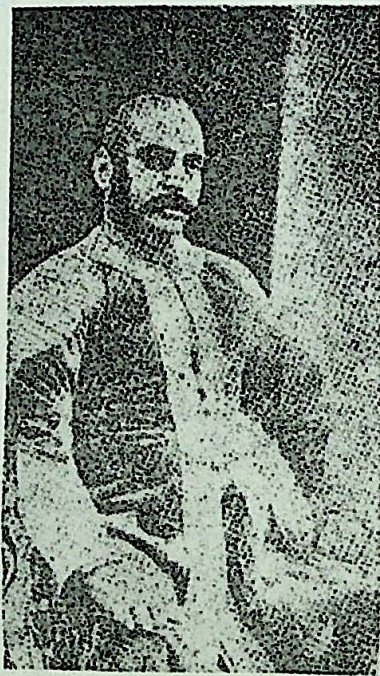
स्व० महाराज कालका प्रसाद

हुई । प्रारम्भ में आप कई रियासतों में रहे । जयपुर, जोधपुर, रायगढ़ तथा मैहर दरबारों में काफी दिनों तक रहे । जीवन के अन्तिम दिनों में कलकत्ता में रह रहे थे । पं० जयलाल लय-ताल के महापंडित माने जाते थे और उनकी गणना एक ओर अच्छे नर्तकों में होती थी तो दूसरी ओर वे एक अच्छे तबलिये माने जाते थे । उस समय के अच्छे-अच्छे तबलिये उनका लोहा मानते थे । उनके निधन से संगीत-जगत को बड़ी क्षति पहुँची ।

□

कालिका प्रसाद

नृत्य सम्राट शम्भू महाराज के पिता एवं गुरू लखनऊ घरानें के स्तम्भ पं० कालिका प्रसाद थे । दोनों नर्तकों ने नृत्य-जगत में बड़ी उथल-पुथल मचा दी थी । नृत्य के साथ-साथ आपको गायन, विशेषकर ठुमरी में बड़ी प्रवीणता थी । नृत्य करते-करते ठुमरी गाते और उसका भाव बताते । नारी की कोमलता और शृंगारिकता की अभिव्यक्ति इतनी कुशलता से करते कि दर्शकों को दाँतों तले अँगुली दबाना पड़ता । उस समय की अनेक गायिकाओं ने उनसे ठुमरी गायन सीखा ।

कालिका प्रसाद स्वभाव के बड़े सरल और मिलनसार थे । उन्हें घमन्ड छू तक नहीं गया था । उनका रहन-सहन भी अत्यन्त सादा था । उनके तीन पुत्र हुये, जगन्नाथ प्रसाद (अच्छन महाराज), वैजनाथ प्रसाद (लच्छू महाराज) और शम्भू महाराज । इस समय इन तीनों पुत्रों में से कोई भी जीवित नहीं है ।

□

रोशन कुमारी

उत्तर भारत की प्रख्यात नृत्यांगना कु० रोशन को कौन नहीं जानता ? कौन संगीत प्रेमी उनकी बिजली सी चमक-दमक और तैयारी से परिचित नहीं है । जयपुर घराने की कथक नृत्य-शैली की चरमावस्था

कु० रोशन की नृत्य में देखी जा सकती है। जिस स्फूर्ति से आप रंग-मंच पर आती हैं और तोड़ों का प्रदर्शन करती हैं, दर्शक आश्चर्य चकित हो जाते हैं। देखने से यह अनुमान नहीं लग पाता कि किस समय किधर से निकल जायेंगी, इसलिये तबलिये आपकी संगत बहुत सतर्कता से करते हैं। तबलिये के साथ आपके तोड़े-परण की होड़ साधारण दर्शकों के लिये बड़े आनन्द का विषय रहता है। अगर आपको अच्छा तबलिया मिल गया तो बस आपके ही कार्यक्रम की धूम मच जाती है। साधारण से साधारण दर्शक और समझदार कलाविज्ञ दोनों आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं।

आप अम्बाला की प्रख्यात गायिका और अभिनेत्री जोहरा बेगम की पुत्री हैं। आपके पिता फकीर मोहम्मद भी एक प्रसिद्ध पखावजी हैं। इस प्रकार आपको संगीत-विद्या माता और पिता दोनों ओर से प्राप्त हुई। कथक नृत्य की प्रारम्भिक शिक्षा आपको के० एस० मोरे से प्राप्त हुई। कुछ वर्षों के बाद आपने जयपुर घराने के पं० सुन्दर प्रसाद से कथक नृत्य की जटिलता को सीखा। आपने गोविंद राज पिल्लई से भरतनाट्यम की भी शिक्षा प्राप्त की। आपके पिता फकीर मोहम्मद आपकी साधना की ओर बहुत ध्यान देते हैं और स्वयं अभ्यास कराते हैं। रंग-मंच पर भी पखावज लेकर दर्शक के सम्मुख बैठ जाते हैं। आपका कार्यक्रम भारत के सभी मुख्य स्थानों पर हो चुका है।

□

लच्छू महाराज

लखनऊ घराने के प्रतिनिधि एवं शम्भू महाराज के भ्राता पंडित लच्छू महाराज के बचपन का नाम लच्चू था जो बिगड़ते-बिगड़ते लच्छू हो गया। संगीत-जगत में आप उसी नाम से प्रसिद्ध थे। आपका असली नाम बैजनाथ प्रसाद था। कुछ समय तक बम्बई में रहकर चलचित्रों में

नृत्य का निर्देशन किया। संगीत का दुर्भाग्य ही कहिये कि अच्छे-अच्छे कलाकार जीविकोपार्जन के लिये सिनेमा-जगत में चले जाते हैं और उनकी अथाह विद्या का लाभ साधारण लोग नहीं कर पाते। लच्छू महाराज कालिका प्रसाद के पुत्र और लखनऊ घराने के रत्न माने जाते थे। आपकी अवस्था जब साठ वर्षों से भी अधिक हो चुकी थी, तो उस समय भी जब कभी आप विभिन्न भाव दिखाने लगते तो देखते ही बनता। उनकी अवस्था का अनुमान करना मुश्किल हो जाता।

आपका जन्म लखनऊ में हुआ और बचपन भी वहीं व्यतीत हुआ। जन्मजात प्रतिभा और संस्कार के कारण आपकी उन्नति तीव्र गति से हुई। लखनऊ में जब आपने अपना पहला कार्यक्रम दिया तो उसी समय से आपके समुन्नति भविष्य की आशा की जाने लगी। कुछ ही समय की साधना के बाद आप लब्ध-प्रतिष्ठित कलाकार हो गये। बिन्दादीन महाराज के कोई सन्तान नहीं थी। अतः उनकी मृत्यु के बाद आप उनकी सारी सम्पत्ति के अधिकारी हुये। विशाल धन-सम्पत्ति और स्वतंत्रता आपके लिये अनिष्टकर हुई। कुछ बुरी आदतें पड़ गईं जिससे उनका अधिकांश धन शीघ्र ही समाप्त हो गया। कुछ दिनों के लिए नवाब रामपुर के आश्रय में चले गये। वहाँ भी कुछ दिनों तक रहने के बाद कई रियासतों में घूमते रहे। अन्त में आप बम्बई चले गये जहाँ चलचित्र जगत ने आपको अपना लिया। आपने अनेक चलचित्रों में निर्देशन किया है और प्रत्येक में आशातीत सफलता मिली। सन् १९७२ में आप बम्बई से लखनऊ आ गये और आपको कथक केन्द्र, लखनऊ के निदेशक का भार सौंपा गया। कार्य करते-करते सन् १९७७ में आपकी मृत्यु लखनऊ में हो गई। आपने अनेक शिष्य तैयार किये। आप नृत्य-नाटिकाओं की रचना में बड़े कुशल थे।

□

कुछ पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या

नृत्य—शरीर के विभिन्न अंगों के संचालन द्वारा मन के भाव प्रकट करने को नृत्य कहते हैं। नृत्य संगीत का एक अंग है। संगीत के अन्य अंग हैं गायन और वादन। तीनों एक दूसरे के सहायक होते हैं और तीनों के सहयोग से संगीत पूर्ण होता है। नृत्य के मुख्य दो रूप हैं—पहला लोक नृत्य है और दूसरा शास्त्रीय नृत्य। किसी शुभ अवसर, पर्व या सफलता प्राप्त करने पर खुशी में थिरकने को देसी या लोक नृत्य कहते हैं। ऐसे नृत्यों में कोई नियम नहीं होता। जो नृत्य नियमबद्ध होता है अर्थात् जिसमें नियमानुसार सिर से पैर तक शरीर के विभिन्न अंग चलाये जाते हैं शास्त्रीय नृत्य कहलाता है। इस नृत्य में सफलता प्राप्त करने के लिए कठिन साधना करनी पड़ती है।

नाट्य नृत्य—नाट्य का अर्थ है नाटक करना। जब किसी पात्र की वेश-भूषा, चाल-ढाल, बोली तथा अंग-संचालन की नकल की जाय अथवा किसी कथा के अनुसार अभिनय किया जाय तो उसे नाट्य कहते हैं।

कथक नृत्य—यह मुख्यतः उत्तर प्रदेश का शास्त्रीय नृत्य है। इसका प्रचार उत्तर भारत के अन्य प्रान्तों में भी है। इसे पुरुष और स्त्री दोनों अपनी-अपनी विशिष्ट वेश-भूषा में करते हैं। एक व्यक्ति किसी वाद्य पर लहरा देता है तो दूसरा तबला या पखावज से संगति करता है। नर्तक आमद, ठाठ, बोल, तोड़े, परन, टुकड़े, ततकार आदि तैयारी और सफाई के साथ दिखाता है। इस नृत्य में घुंघरू का जैसा जटिल प्रयोग होता है वैसा दुनिया के अन्य किसी नृत्य में नहीं होता। विशेष विवरण के लिए पृष्ठ ३१ देखिये।

ततकार—नृत्य में पैरों में बंधे घुंघुरुओं से जो ध्वनि उत्पन्न होती है उसे ततकार कहते हैं जैसे ता थेई-थेई तत। ता थेई ध्वनि के कारण उससे उत्पन्न ध्वनि को तथकार कहा गया जो बिगड़ता-बिगड़ता ततकार हो गया। इसका महत्व शास्त्रीय नृत्यों में विशेषकर कथक नृत्य में बहुत है। ततकार के द्वारा नर्तक लयकारी और चमत्कार दिखाता है। प्रत्येक ताल की ततकार उसकी मात्रा और विभाग के अनुसार होती है। तबले के समान ततकार के भी पल्टे और लय-बाँट होते हैं।

ठाट—कथक नृत्य प्रारम्भ करने के तरीके को ठाट कहते हैं। इसमें छोटे-छोटे मुखड़े, टुकड़े, तिहाई आदि लेकर नेत्र, भौं, गर्दन, कलाई आदि को लयबद्ध संचालन करते हैं। कुछ विद्वान टुकड़ा अथवा परन के बाद एक मुद्रा में खड़े होने को ठाट कहते हैं। कुछ विद्वान ठाट को करण भी कहते हैं।

सलामी—इसे नमस्कार भी कहते हैं। राजदरबारों में पहले नर्तक नृत्य के किसी तोड़े द्वारा राजा को नमस्कार करता था जिसे सलामी कहा जाता था। सलामी इस प्रकार समाप्त होती है कि सम पर सलाम या नमस्कार करने की मुद्रा आती है। स्व० कालिका व बिंदादीन महाराज ने अनेक सलामी तोड़े बनाये। मुसलमानी और अंग्रेजी राज्य समाप्त होने के बावजूद भी सलामी शब्द का प्रयोग होता चला आ रहा है। इसे नमस्कार कहना अधिक उचित है। नीचे इसका एक उदाहरण देखिये जो तीन ताल में निबद्ध है,

तऽऽत तऽऽत् ताऽथेई थेईतत् | आऽथेई थेईतत् तऽऽत् तऽऽत् |
×　　　　　　　　　　　　　२

थेई याथे इया श्राम | ततत ताऽथेईथेईतत
०　　　　　　　　　　३

आऽथेईथेईतत ततत |
×

आमद—जिस टुकड़े से नर्तक अपना नृत्य प्रारम्भ करता है उसे आमद कहते हैं। इसका उदाहरण इस पुस्तक के क्रियात्मक खण्ड में देखिये।

टुकड़ा—नृत्य के बोलों के छोटे समूह को टुकड़ा कहते हैं। यह अधिकतर एक आवृत्ति में सम से सम तक होता है। कुछ टुकड़ों के अन्त में तिहाई होती है और कुछ टुकड़े तिहाई रहित होते हैं। नीचे तीन ताल में एक टुकड़े का नमूना देखिये।

ताऽथेई थेईतत आऽथेई थेईतत | थेई थेई थेई त्राम |
×   २

थेई तत थेई त्राम | थेई ऽऽ थेई थेई | थेई त्राम थेई तत |
०   ३   ×

थेई त्राम थेई ऽऽ | थेई थेई थेई त्राम | थेई तत थेई त्राम | ता
२   ०   ३   ×

परन—नृत्य के जोरदार बोलों का वह समूह जो दो, तीन, चार अथवा अधिक आवृत्तियों का हो उसे परन कहते हैं। इसमें अधिकतर शब्द दोहराते हुये चलते हैं। परन दो प्रकार का होता है—तिहाईदार और बिना तिहाई का। तिहाईदार परन का एक प्रकार चक्करदार परन होता है। इस परन में तिहाई अवश्य होती है।

चक्करदार परन—जिस प्रकार किसी तिहाई में किसी बोल-समूह को तीन बार नाच कर सम से मिलते हैं, उसी प्रकार चक्करदार परन में किसी वजनदार और खुले बोल-समूह को तीन बार बजाकर सम पर आते हैं। इसीलिए चक्करदार परन को तिहाई का एक विशिष्ट प्रकार भी कहा जा सकता है। आगे तीन ताल में चक्करदार परन का एक नमूना देखिये—

गदिगन नागेतिट तागेतिर किटतक | धाकिटधा ऽनधाऽ
×   २
गदिगन धाऽगदि | गनधाऽ गदिगन धाऽऽऽ गदिगन |
०
नागेतिट तागेतिर किटतक धाकिटधा | ऽनधाऽ गदिगन
३   ×
धाऽगदि गनधाऽ | गदिगन धाऽऽऽ गदिगन नागेतिट |
२
तागेतिर किटतक धाकिटधा ऽनधाऽ | गदिगन धाऽगदि
०   ३
गनधाऽ गदिगन |
×

गत—कथक नृत्य में गत का बड़ा महत्व है। यह गति का अप्रभ्रंश अथवा बिगड़ा हुआ रूप है। नृत्य के चाल को गत कहते हैं। इसकी लय बोल के अनुसार धीमी या तेज कर दी जाती है। भरतकृत नाट्य-शास्त्र के तेरहवें अध्याय में गत पर विस्तार में प्रकाश डाला गया है। गत को मुख्य दो प्रकार से प्रयोग किया जाता है—गत निकास और गत भाव। नीचे जयपुर घराने की गत का एक नमूना देखिये—

तत | धा क्रधा धिता कत | - कत - कत | ता थेई थेई तत |
०   ३   ×
| - थेई - तत | थेई - तत - | थेई - तत - |
२   ०   ३

गत-भाव—इसमें नर्तक अकेले ही किसी कथानक के भाव को अंग-संचालन द्वारा प्रकट करता है। नर्तक सभी पात्रों का अभिनय अकेले ही एक दूसरे के बाद करता है जैसे कृष्ण लीला में कभी कृष्ण,

कभी गोपियाँ, कभी ग्वाल-बाल और कभी माँ यशोदा का अभिनय करता है। नर्तक अधिकतर पौराणिक कथानकों का चयन करता है। जयपुर घराने में इसका विशेष विकास हुआ।

गत-निकास—इसमें नर्तक किसी एक मुद्रा में निकल कर आता है और उसी मुद्रा में ठाह व दुगुन में चलन करके दिखाता है। निकास का अर्थ है निकलना। गत निकास का विकास लखनऊ घराने में विशेष रूप से हुआ।

टुकड़ा-तोड़ा—नृत्य में तालबद्ध बोलों के छोटे समूह को टुकड़ा और बड़े समूह को तोड़ा कहते हैं। टुकड़ा और तोड़ा दोनों समाप्त होने पर सम पर आते हैं। टुकड़ा छोटा होता है और तोड़ा बड़ा होता है। तोड़ा में विभिन्न लयकारियाँ भी दिखाई जाती हैं। नीचे तीनताल में तोड़ा का एक उदाहरण देखिये। कुछ विद्वान् तोड़ा और टुकड़ा में कोई भेद नहीं मानते।

ताऽ थेई तत थेई | आऽ थेई तत थेई | थेई थेईता थेई थेईताऽ |
×   २   ०

थेई थेई तत तत | ताऽ ऽऽ तत तत | ताऽथेई थेईतत आऽथेई
३   ×   २

थेईतत | तिगधाऽदिगदिग थेईत्राम थेईऽऽ तिगधाऽदिगदिग |
         ०

थेईत्राम थेईऽऽ तिगधाऽदिगदिग थेईत्राम |
३

पढ़न्त—कभी-कभी नर्तक नृत्य के किसी बोल की बारीकियों को समझाने के लिये उसे नाचने के पहले मुख से पढ़कर लय-ताल में सुना देता है जिसे पढ़न्त कहते हैं। पढ़न्त सुनने के बाद वह तोड़ा साधारण

श्रोता के लिये अधिक बोधगम्य हो जाता है। संक्षेप में नृत्य या तबले के किसी बोल को लय-ताल में सुनाना पढ़न्त कहलाता है।

निकास—नर्तक रंगमंच पर नृत्य करने के लिये एक मुद्रा में खड़ा रहता है और एक दूसरे के बाद कई मुद्रायें दिखाता है। एक मुद्रा से दूसरे मुद्रा में जाने को निकास कहते हैं। वह ताल में किसी मात्रा से पदाघात एवं अंगों का भावात्मक संचालन करते हुए अपने स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच कर एक आकर्षक मुद्रा में खड़ा हो जाता है। इसी को निकास कहते हैं।

अंग—मनुष्य के शरीर के विभिन्न हिस्सों को अंग कहा गया है। नृत्य में मुख्य ६ अंग माने गये हैं—सिर, हाथ, वस (सीना), बगल, कमर और पैर।

प्रत्यंग—शरीर का वह हिस्सा जो नृत्य करते समय सरलता से मोड़ा जा सकता है, प्रत्यंग कहलाता है। ये मुख्य ६ हैं—गर्दन, कन्धा, पीठ, बांह, जंघा और पुष्टिका। इनके अतिरिक्त कलाई, पंजा, हाथ की कुहनी और पैर के घुटने भी प्रत्यंग कहलाते हैं।

उपांग—शरीर के छोटे अंगों को उपांग कहा गया है जो नृत्य के लिये बड़े आवश्यक हैं जैसे सिर के १२ उपांग हैं—नेत्र, भौं, आँख की पुतली, पलक, ओठ, दाँत, जबड़ा, जीभ, मुख, नाक, गाल और ठुड्डी।

हस्तक—कथक नृत्य में लय-ताल में हाथ के संचालन को हस्तक या हस्त मुद्रा कहते हैं। आकर्षक नृत्य के लिये हाथों का संचालन ठीक होना चाहिये। कुछ विद्वान मुद्रा को ही हस्तक कहते हैं, किन्तु यह ठीक नहीं, क्योंकि हस्तक शब्द स्वयं अपने अर्थ का परिचय देता है। हस्तक में पूरे हाथ का संचालन होता है। इनका विकास विभिन्न घरानों में अलग-अलग ढंग से हुआ है। हस्तक से किसी भाव की अभि-व्यक्ति नहीं होती, बल्कि टुकड़े-परन आदि में इनका प्रयोग होता है।

अदा—कथक नृत्य में किसी विशेष भाव को स्पष्ट करने को अथवा प्रस्तुत करने को अदा कहते हैं। जब ठुमरी अथवा क़िसी शृंगार प्रधान गीत का भाव मुद्राओं द्वारा प्रकट करते हैं तो उसे अदा कहते हैं। इसे 'हेला' भी कहते हैं।

घुमरिया—नृत्य करते समय चक्कर लगाने को घुमरिया या चक्कर कहते हैं। इसे भ्रमरी या फिरकनी भी कहते हैं।

तैयारी—द्रुत लय में सफाई के साथ नाचना तैयारी कहलाता है। तैयारी में ततकार, अंग-संचालन, भाव-प्रदर्शन आदि की सफाई और चपलता आती है।

अञ्चित—पैर के दोनों पंजे उठाकर केवल एड़ी से पृथ्वी पर आघात करने को अंचित कहते हैं।

कुञ्चित—एड़ी उठाकर खाली पंजे से पृथ्वी पर आघात करने के बाद उसे दूसरे पैर के पीछे ले जाने को कुञ्चित कहते हैं।

विक्षिप्त—यह एक प्रकार के अंग-संचालन का नाम है। शरीर के किसी अंग को झिटकने को विक्षिप्त कहते हैं।

गति—पैरों की क्रिया को गति कहते हैं। गति के मुख्य दो प्रकार होते हैं—चलित गति और स्थिर गति। एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने को चलित गति और एक स्थान पर खड़े रह कर चलने का भाव दिखाने को स्थिर गति कहते हैं।

अभिनय—नर्तक जब किसी के कार्यों की नकल करता है तो उसके इस क्रिया को अभिनय कहते हैं, जैसे—कृष्ण लीला का भाव दिखाते समय वह कृष्ण और ग्वालों की नकल करता है कि कृष्ण ग्वाल-बाल के साथ गोपियों को छेड़ते हैं और दही की हांडी तोड़ देते हैं। ग्वालिन माता यशोदा से शिकायत कर आती हैं इत्यादि-इत्यादि।

पिन्डी—नृत्य में विभिन्न परिवर्तनों अर्थात् एक विशेष आकृति को

पिन्डी कहते हैं। भिन्न-भिन्न नृत्यों की अलग-अलग पिन्डियाँ होती हैं। ये कथक नृत्य में मुख्य १२ होती हैं जैसे—प्रवेश, वन्दना, लय, शब्द आदि। भरतनाट्यम नृत्य में आठ पिन्डियाँ मानी जाती हैं।

स्थानक—शरीर को बिना हिलाये-डुलाये खड़े रहने की विभिन्न स्थितियों को स्थानक कहते हैं। नाट्य शास्त्र में भरत ने ६ स्थानक बताये हैं। उनके नाम हैं—समपाद, वैष्णव, मण्डल, वैशाख, आलीढ़ और प्रत्यालीढ़। नृत्य में स्थानक का बड़ा महत्व है क्योंकि इसी से नृत्य शुरू होता है और इसी पर समाप्त होता है। स्थानक को स्थान भी कहते हैं।

रेचक—शरीर के विभिन्न अंगों को अलग-अलग ढंग से लय में संचालन करने को रेचक कहते हैं। भरत मुनि के अनुसार इसके मुख्य चार प्रकार होते हैं—पद रेचक, कटि रेचक, हस्त रेचक और ग्रीवा रेचक। पैरों का संचालन पद रेचक कमर हिलाना कटि रेचक, हाथों की क्रिया हस्त रेचक और गर्दन घुमाना ग्रीवा रेचक कहलाता है।

पाद-विच्छेप—पैरों के संचालन को पाद-विच्छेप कहते हैं। इसके दो प्रकार हैं - चारी और गति चारी।

स्तुति—नृत्य द्वारा ईश्वर की आराधना को स्तुति कहते हैं।

बोल—तालबद्ध रचना को बोल कहते हैं। इसके मुख्य तीन प्रकार हैं, नृत्यांगी, तालांगी और कवितांगी। जिस बोल में नृत्य के वर्ण जैसे ता थेई आदि हों उसे नृत्यांगी बोल कहते हैं। जिस बोल में तबला अथवा पखावज के वर्ण हों उसे तालांगी और जिस बोल में कविता हो उसे कवितांगी बोल कहते हैं।

करण—नृत्य में हाथ-पैर के संयुक्त चलन को करण कहते हैं। इसके अनेक प्रकार सम्भव हैं। भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र में १०८ प्रकार के करण बताये हैं। ताण्डव नृत्य में इसका बड़ा महत्व है।

अंगहार—शरीर के विभिन्न अंगों को ठीक प्रकार से रखने को अंगहार कहते हैं। इसकी रचना करणों को मिलाने से होती है इसलिए इसे भी ताण्डव नृत्य में बड़ा महत्वपूर्ण माना जाता है। भरत मुनि ने ३२ प्रकार के अंगहार बताये हैं।

भंगि-भेद—जब नृत्य में कोई स्थानक बनाकर खड़े होते हैं तो शरीर को एक या दो स्थान से टेढ़ा करके मुद्रा बनाई जाती है, इसी को भंगि-भेद कहते हैं। इसके कई प्रकार सम्भव हैं, जैसे एक भंग (सीधा खड़ा होना), द्विभंग (शरीर दो भागों में बँटा होना), त्रिभंग (तीन भागों में बँटा होना) आदि।

पलटा—विभिन्न प्रकार से बोलों का क्रम बदलने को पलटा कहते हैं। नृत्य में ततकार या टुकड़ों-तोड़ों का क्रम चमत्कार हेतु बदला जाता है। यही क्रिया वादन और गायन में भी होती है। तबला में कायदा के बालों को उलटने-पलटने को पलटा कहते हैं। गायन में अलंकार को पलटा कहते है। नृत्य के गतों में हस्तक बदलने को भी पलटा कहते हैं।

चलन—अपने स्थान से स्वाभाविक रूप से चलने को चलन या चाल कहते हैं। इसके अनेक प्रकार प्रचलित हैं।

फिरन—इसका शाब्दिक अर्थ है घूमना या वापस होना। पहले चलन (आगे बढ़ना) और उसके बाद फिरन (वापस होना) होता है। निकास की गतों में नर्तक, पहले आगे बढ़ता है और फिर वापस होता है। उसके वापस होने को फिरन कहते हैं।

कसक—कथक नृत्य में सुन्दरता के साथ कलाई चलाने को कसक या कलास कहते हैं।

मसक—साँस लेने व छोड़ने में वक्ष के उतार-चढ़ाव को मसक कहा गया है। जिस तरह चलन-फिरन एक साथ प्रयोग किये जाते हैं, उसी प्रकार कसक-मसक शब्द एक साथ प्रयोग किये जाते हैं।

कटाक्ष—बोल-चाल की भाषा में कटाक्ष का अर्थ है तिरछी दृष्टि से देखना, किन्तु कथक नृत्य में इसका अर्थ इससे अलग है। जब नृत्य में किसी बोल, तोड़ा अथवा मुखड़ा लेकर सम से मिलते हैं तो अचानक दृष्टि (निगाह) को एक स्थान पर फेंकते हैं। एक कोण में अचानक दृष्टि फेंकने को कटाक्ष कहते हैं।

नाज—जब नर्तकी नखरे के साथ नृत्य करती है तो उसे नाज कहते हैं। नाज का अर्थ है नखरा या घमंड। नाज नाम की एक गत भी होती है।

अन्दाज—इसका शाब्दिक अर्थ है तरीका या ढंग। कथक नृत्य में इस शब्द का बहुत प्रयोग होता है, जैसे ततकार का अन्दाज, बोल पढ़ने का अन्दाज, खड़े होने का अन्दाज इत्यादि।

कवित्त—राधा-कृष्ण से सम्बन्धित कविता का भाव नृत्य द्वारा दिखाने की परम्परा है। जब किसी कविता को लय-ताल बद्ध कर नृत्य के बोलों के साथ प्रस्तुत किया जाता है तो उसे कवित्त कहते हैं।

प्रिमलू—जब नृत्य के बोलों के साथ तबला-पखावज के बोल तथा कविता मिलाकर नृत्य करते हैं तो उसे प्रिमलू कहते हैं।

काल—गायन, वादन तथा नृत्य में जो समय लगता है उसे काल कहते हैं। काल नापने के लिये ताल बनाये गये।

लय—गायन, वादन तथा नृत्य की रफ्तार को लय कहते हैं। संगीत में लय बहुत आवश्यक है। बिना लय के संगीत नहीं हो सकता। लय के तीन प्रकार माने गये हैं—

(१) विलम्बित लय, (२) मध्य लय और (३) द्रुत लय

विलम्बित लय—जब लय बहुत धीमी होती है तो उसे विलम्बित लय कहते हैं।

मध्य लय—साधारण लय को मध्य लय कहते हैं।

द्रुत लय—जब लय तेज होती है तो उसे द्रुत लय कहते हैं ।

संगीतज्ञ अपनी इच्छानुसार लय धीमी तेज कर लेता है । मोटे तौर से विलम्बित लय की दूनी मध्य और मध्य की दूनी द्रुतलय कही जाती है । घड़ी की १ टिक मध्य लय की १ मात्रा के बराबर मानी जाती है ।

मात्रा—संगीत में समय नापने के पैमाने को मात्रा कहते हैं । जिस प्रकार तौल नापने के लिये कि०ग्राम आदि बनाये गये, लम्बाई नापने के लिये से०मीटर, मीटर, बनाया गया, उसी प्रकार संगीत में समय नापने के लिये मात्रा बनाया गया । विलम्बित लय में मात्रा बड़ा, मध्य लय में साधारण और द्रुत लय में छोटा होता है ।

ताल—विभिन्न मात्राओं के समूह को ताल कहते हैं । यह 'काल' नापने का एक पैमाना है । केवल मात्रा से काम पूरा नहीं होता इसलिये ताल बनाये गये । ताल मात्राओं का समूह है । सोलह मात्रे का समूह तीनताल और दस मात्रे का समूह झपताल कहलाता है ।

आवर्तन—किसी ताल की पूरी मात्रायें या उसके सम्पूर्ण बोल से एक आवर्तन होती है, जैसे धा धी ना । धा तू ना । से दादरा ताल की एक आवर्तन या आवृत्ति पूरी होती है ।

ठेका—किसी ताल के निश्चित बोल को ठेका कहते हैं, जैसे झपताल का ठेका धी ना । धी धी ना, आदि है । ठेका को तबले अथवा पखावज पर बजाया जाता है ।

सम—प्रत्येक ताल की पहली मात्रा सम कहलाती है । सम पर पहली ताली पड़ती है । तबले का ठेका सम से अर्थात् पहली मात्रा से शुरू किया जाता है । गाने, बजाने व नृत्य में सम पर एक विशेष प्रकार का जोर पड़ता है ।

ताली-खाली—हाथ से ताल लगाते समय सम के बाद जहाँ पर ताली देते हैं उसे ताली या भरी और जहाँ हाथ एक ओर हिला देते हैं उसे खाली कहते हैं ।

विभाग—प्रत्येक ताल के कुछ स्वाभाविक खण्ड या हिस्से होते हैं जिन्हें विभाग कहते हैं, जैसे तीनताल में चार विभाग होते हैं।

जाति—जाति से किसी ताल के विभाग की मात्रा की संख्या का बोध होता है। जब किसी विभाग की मात्रा बदल जाती है, तो उसकी जाति भी बदल जाती है। दादरा ताल तिस्त्र जाति की ताल है, क्योंकि इसके प्रत्येक विभाग में तीन मात्रायें हैं। इसी प्रकार तीनताल चतस्त्र जाति का ताल है, क्योंकि इसके प्रत्येक विभाग में चार मात्रायें हैं। इस प्रकार जातियाँ पाँच हैं—चतस्त्र, तिस्त्र, मिश्र, खन्ड और संकीर्ण। चतस्त्र जाति के विभाग में चार, तिस्त्र में तीन, मिश्र में सात, खंड में पाँच और संकीर्ण जाति के ताल के प्रत्येक विभाग में नौ मात्रायें होती हैं। जिस ताल के सभी विभाग बराबर मात्रा के नहीं होते, उसकी जाति निर्धारित नहीं की जा सकती। कर्नाटक ताल पद्धति में जाति बदलने से केवल लघु की मात्रा बदलती है।

दुगुन, तिगुन और चौगुन—एक मात्रा में दो मात्रा के भाग बोलने को दुगुन, तीन मात्रा के भाग बोलने को तिगुन और चार मात्रा के भाग बोलने को चौगुन कहते हैं। दुगुन, तिगुन, चौगुन आदि को लयकारी कहते हैं। लयकारी के कुछ उदाहरण नीचे देखिये।

दुगुन—धाधिं   धिंधा

तिगुन—धाधिंधिं   धाधाधिं

चौगुन—धाधिंधिंधा   धाधिंधिंधा

तिहाई—किसी वर्ण समूह को तीन बार नाचकर या तबला पर बजाकर सम पर आने को तिहाई कहते हैं, जैसे—

ताथे   ईता   थेई,   ताथे । ईता   थेई,   ताथे   ईता |
०   २   ×

तिहाई की क्रिया गायन, वादन तथा नृत्य तीनों में की जाती है, किन्तु नृत्य में इसका बहुत महत्व है। अधिकतर ततकार, टुकड़े आदि तिहाई से समाप्त होते हैं। तिहाई से दर्शकों को अधिक आनन्द मिलता है।

संगीत—बोल-चाल की भाषा में संगीत से केवल गायन समझा जाता है, किन्तु संगीत में गायन, वादन और नृत्य तीनों के समूह को संगीत कहते हैं। इस प्रकार संगीत के मुख्य तीन अंग हुये—गायन, वादन और नृत्य। शारंगदेव लिखित 'संगीत रत्नाकर' में कहा गया है, 'गीतं, वाद्यं तथा नृत्यं, त्रयं संगीत मुच्यते' अर्थात् गाना, बजाना और नृत्य इन तीनों को संगीत कहते हैं और इनमें आपस में घनिष्ट सम्बन्ध है।

संगीत पद्धति—भारतवर्ष में मुख्य दो प्रकार का संगीत प्रचार में है जिन्हें संगीत पद्धति कहते हैं। उनके नाम है

उत्तरी संगीत पद्धति—इसको हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति भी कहते हैं। यह पद्धति उत्तरी हिन्दुस्तान में—बंगाल, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा महाराष्ट्र प्रान्त में प्रचलित है।

दक्षिणी संगीत पद्धति—यह तमिलनाडु, मैसूर, आंध्र, कर्नाटक आदि दक्षिण के प्रदेशों में प्रचलित है। ये दोनों पद्धतियाँ एक दूसरे से अलग अवश्य हैं, किन्तु बहुत कुछ बातें दोनों पद्धतियों में समान रूप से पाई जाती हैं। दक्षिणी संगीत कों कर्नाटक संगीत भी कहते हैं।

ध्वनि—जो कुछ हम कानों द्वारा सुनते हैं वह ध्वनि है। गायन की आवाज भी ध्वनि है, बालक के रोने की आवाज भी ध्वनि है तथा स्कूटर, मोटर आदि से जो आवाज उत्पन्न होती है वह भी ध्वनि है। कुछ ध्वनियों को लोग सुनना पसन्द करते हैं और कुछ को नहीं। संगीत का सम्बन्ध केवल उस ध्वनि से है जो मधुर है। संगीत में मधुर ध्वनि को नाद कहते हैं।

ध्वनि की उत्पत्ति—ध्वनि की उत्पत्ति कम्पन से होती है। जब किसी वाद्य को बजाते हैं तो उसमें कम्पन होता है और ध्वनि उत्पन्न होती है, जैसे सितार अथवा बेला में तार के कम्पन से; ढोलक, तबला और पखावज में चमड़े के कम्पन से और बाँसुरी व शहनाई में हवा के कम्पन से ध्वनि उत्पन्न होती है। संगीत में कम्पन को आन्दोलन कहते हैं।

आन्दोलन—तानपूरे व सितार के तार को स्पर्श करने अथवा छेड़ने से तार के ऊपर-नीचे जाने को आन्दोलन अथवा कम्पन कहते हैं। इससे ध्वनि उत्पन्न होती है। सितार का तार पहले ऊपर जाकर अपने स्थान पर आता है और फिर नीचे जाकर अपने स्थान पर आता है। इस प्रकार एक आन्दोलन पूरा होता है। जब तक तार पर छेड़ने का प्रभाव रहता है, तार आन्दोलित होता है और ध्वनि उत्पन्न होती है।

नाद—नियमित और स्थिर आन्दोलन-संख्या वाली मधुर ध्वनि को नाद कहते हैं। दूसरे शब्दों में संगीतोपयोगी मधुर ध्वनि को नाद कहते हैं। संगीत में इसी ध्वनि का उपयोग होता है। संगीत में प्रयोग की जाने वाली ध्वनि नियमित तथा मधुर होती है। जो ध्वनि मधुर नहीं होती है, न तो वह नाद कहलाती है और न संगीत में प्रयोग की जाती है।

नाद की विशेषताएँ—नाद की तीन विशेषतायें अथवा लक्षण माने जाते हैं—

(१) नाद का छोटा अथवा बड़ा होना।
(२) नाद की ऊँचाई अथवा निचाई।
(३) नाद की जाति अथवा गुण।

(१) नाद का छोटा-बड़ा होना—मधुर ध्वनि को हम धीरे से उत्पन्न

कर सकते हैं अथवा जोर से। धीरे से उत्पन्न की गई ध्वनि को छोटा नाद और जोर से उत्पन्न की गई ध्वनि को बड़ा नाद कहते हैं। छोटा नाद कम दूरी तक और बड़ा नाद अधिक दूरी तक सुनाई पड़ता है।

(२) **नाद की ऊँचाई-निचाई**—गाते-बजाते समय हम यह अनुभव करते हैं कि सा से ऊँचा रे, रे से ऊँचा ग, ग से ऊँचा म, म से ऊँचा प रहता है। इसी प्रकार जैसे-जैसे हम ऊपर बढ़ते जाते हैं, स्वर ऊँचा होता जाता है। स्वर ऊँचा होने का अर्थ यह है कि प्रत्येक स्वर की प्रति सेकण्ड में होने वाली आन्दोलन-संस्था बढ़ती जायेगी।

(३) **नाद की जाति व गुण**—प्रत्येक वाद्य का स्वर एक-दूसरे से अलग होता है जैसे –वाइलिन (बेला) का स्वर सितार से, सितार का सारंगी से, सारंगी का तबले से तथा हारमोनियम का स्वर सरोद के स्वर से भिन्न होता है। इसी को नाद की जाति अथवा गुण कहते हैं। नाद की जाति के कारण अगर हमारी आँखें बन्द हों तो भी हम पहचान लेते हैं कि मुझे कौन बुला रहा है, हमारे मित्र, भाई-बहन अथवा और कोई। इसका कारण यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की आवाज एक-दूसरे से भिन्न होती है। इसी प्रकार प्रत्येक वाद्य की ध्वनि, नाद की जाति के कारण, एक-दूसरे से भिन्न होती है।

श्रुति—स्वरों की दूरी नापने का यह एक पुराना माप या पैमाना है। असंख्य मधुर ध्वनियों (नाद) से एक सप्तक में २२ श्रुतियाँ मानी गईं। सातों शुद्ध स्वर इन्हीं श्रुतियों में बँटे हैं।

स्वर—बाईस श्रुतियों में से मुख्य बारह श्रुतियों को स्वर कहते हैं। ये स्वर सप्तक के अन्तर्गत थोड़ी-थोड़ी दूर पर फैले हुये हैं। इन स्वरों के नाम हैं—षडज, ऋषभ, गन्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद। व्यवहार की सरलता के लिये इन्हें क्रमशः सा, रे, ग, म, प, ध और नि कहा जाता है।

स्वरों के प्रकार– स्वरों के मुख्य दो प्रकार माने जाते हैं—

(१) शुद्ध अथवा प्राकृत स्वर और (२) विकृत स्वर

शुद्ध स्वर—सात मुख्य स्वरों को शुद्ध स्वर कहते हैं। दूसरे शब्दों में जब स्वर अपने निश्चित स्थान पर रहते हैं, तो शुद्ध स्वर कहलाते हैं। इनकी संख्या ७ मानी गई है। इनके संक्षिप्त नाम हैं—सा, रे, ग, म, प, ध और नि।

विकृत स्वर—कुछ स्वर ऐसे होते हैं जो शुद्ध तो होते हीहैं साथ ही साथ विकृत भी होते हैं। जो स्वर अपने निश्चित स्थान से थोड़ा उतर जाते हैं अथवा चढ़ जाते हैं, वे स्वर विकृत कहलाते हैं। रे, ग, ध और नि स्वर शुद्ध होने के साथ-साथ थोड़ा उतर सकते हैं और केवल म स्वर चढ़ सकता है।

कोमल विकृत और तीव्र विकृत—जब कोई स्वर अपनी शुद्धावस्था (निश्चित स्थान) से नीचा होता है जो उसे कोमल विकृत और जब शुद्धावस्था से ऊपर होता है तो उसे तीव्र विकृत कहते हैं। सप्तक में षडज और पंचम के अतिरिक्त शेष स्वर जैसे रे, ग, ध और नी स्वर कोमल विकृत तथा म तीव्र विकृत भी होता है। इस प्रकार एक सप्तक में ७ शुद्ध, ४ कोमल और एक तीव्र कुल मिलाकर १२ स्वर होते हैं। इनका क्रम इस प्रकार है—

सा रे̲ रे ग̲ ग म म॑ प ध̲ ध नि̲ नि

स्वरों को एक और दृष्टिकोण से भी विभाजित किया गया है।

(१) चल स्वर (२) अचल स्वर

चल स्वर—ये वे स्वर हैं जो शुद्ध होने के साथ-साथ विकृत (कोमल अथवा तीव्र) भी होते हैं, जैसे रे, ग, म, ध और नी। रे, ग, ध और नी स्वर कोमल विकृत और म तीव्र विकृत होता है।

अचल स्वर—वे हैं जो सदैव शुद्ध होते हैं, विकृत कभी नहीं होते। सा और प, ये दो स्वर अचल कहलाते हैं, क्योंकि ये अपने स्थान पर अडिग रहते हैं। न तो ये कोमल होते हैं और न तीव्र ही। ये सदैव शुद्ध रहते हैं।

सप्तक—क्रमानुसार सात शुद्ध स्वरों के समूह को सप्तक कहते हैं। हम पीछे बता चुके हैं कि सातो स्वरों के नाम क्रमशः सा, रे, ग, म, प, ध और नि हैं। इसमें प्रत्येक स्वर की आन्दोलन-संख्या अपने पिछले स्वर से अधिक होती है। दूसरे शब्दों में सा स्वर से जैसे-जैसे आगे बढ़ते हैं, स्वर की आन्दोलन-संख्या बढ़ती जाती है। रे की आन्दोलन-संख्या सा से, ग की रे से व म की ग से अधिक होती है। इसी प्रकार प, ध और नि की आन्दोलन अपने पिछले स्वरों से ज्यादा होती है। प्रत्येक सप्तक में सा के बाद रे, ग, म, प, ध, नि स्वर होते हैं। नि के बाद फिर सां आता है और इसी स्वर से दूसरा सप्तक शुरू होता है। यह सां अथवा तार सा अपने पिछले सा से दुगुनी ऊँचाई पर रहता है और इसकी आन्दोलन-संख्या भी अपने पिछले सा से दुगुनी होती है। उदाहरण के लिए अगर मध्य सा की आन्दोलन संख्या २४० है तो तार सा की आन्दोलन संख्या २४० की दुगुनी ४८० होगी। इसलिये सा, प और सां को एक साथ बजाने से उत्पन्न ध्वनि कानों को अच्छी लगती है।

सप्तक के प्रकार—सा से नि तक एक सप्तक होता है। नि के बाद दूसरा सा (तार सा) आता है और इसी स्थान से दूसरा सप्तक शुरू होता है। दूसरा सप्तक भी नि तक रहता है और पुनः नि के बाद अति तार सा आता है, जहाँ से तीसरा सप्तक प्रारम्भ होता है। इसी प्रकार बहुत से सप्तक हो सकते हैं, किन्तु क्रियात्मक संगीत में अधिक से अधिक तीन सप्तक प्रयोग में लाये जाते हैं। प्रत्येक सप्तक में ७ शुद्ध और ५ विकृत स्वर होते हैं। गायन-वादन में ३ सप्तक से अधिक स्वरों

की आवश्यकता नहीं होती। तीनों सप्तकों के निम्नलिखित नाम हैं—

(१) मन्द्र सप्तक (२) मध्य सप्तक और (३) तार सप्तक

मध्य सप्तक—जिस सप्तक में हम साधारणतः अधिक गाते-बजाते हैं मध्य सप्तक कहलाता है। इस सप्तक के स्वरों का उपयोग अन्य सप्तक के स्वरों की अपेक्षा अधिक होता है। यह सप्तक दोनों सप्तकों के मध्य में होता है, इसलिए इसे मध्य सप्तक कहा गया है। मध्य सप्तक के स्वर अपने पिछले सप्तक अर्थात् मन्द्र सप्तक के स्वरों से दुगुनी ऊँचाई पर और अगले सप्तक अर्थात् तार सप्तक के स्वरों के आधे होते हैं।

मन्द्र सप्तक—मध्य सप्तक के पहले का सप्तक मन्द्र सप्तक कहलाता है। यह सप्तक मध्य सप्तक से आधा होता है अर्थात् मन्द्र सप्तक के प्रत्येक स्वर की आन्दोलन-संख्या मध्य सप्तक के उसी स्वर के आन्दोलन की आधी होगी। उदाहरणार्थ अगर मध्य प की आन्दोलन ३६० है तो मन्द्र प की ३६० की आधी १८० होगी, इसी प्रकार अगर मध्य म की आन्दोलन ३२० है तो मन्द्र म की आन्दोलन ३२० की आधी १६० होगी।

तार सप्तक—मध्य सप्तक के बाद का सप्तक तार-सप्तक कहलाता है। यह सप्तक मध्य सप्तक का दुगुना ऊँचा होता है। दूसरे शब्दों में तार सप्तक के प्रत्येक स्वर में मध्य सप्तक के उसी स्वर से दुगुनी आन्दोलन रहती है, उदाहरणार्थ अगर मध्य सप्तक के रे की आंदोलन-संख्या २७० है तो तार रे की आन्दोलन २७० की दुगुनी ५४० होगी।

थाट—सप्तक के १२ स्वरों में से ७ क्रमानुसार मुख्य स्वरों के उस समुदाय को थाट कहते हैं, जिससे राग उत्पन्न होते हों। थाट को मेल भी कहा जाता है। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में मेल शब्द ही प्रयोग किया गया है। अभिनव राग मंजरी में कहा गया है—'मेल स्वर-समूहः स्याद्राग-व्यंजन शक्तिमान', अर्थात् स्वरों के उस समूह को मेल या थाट कहते हैं, जिससे राग उत्पन्न होते हों। थाट दस माने गये हैं।

राग—पांच और सात स्वरों के बीच स्वरों की वह सुन्दर रचना जो कानों को अच्छी लगे उसे राग कहते हैं। शास्त्रीय संगीत में राग का गायन-वादन होता है।

आरोह-अवरोह—स्वरों के चढ़ते हुये क्रम को आरोह जैसे सा रे ग म और उतरते हुए क्रम को अवरोह कहते हैं जैसे प ग रे सा।

अलंकार—स्वरों की नियमानुसार चलन को अलंकार कहते हैं, जैसे—सा रे ग म, रे ग म प, ग म प ध आदि। हर अलंकार में आरोह-अवरोह दोनों होता है। मध्य सा से अलंकार शुरू होता है और तार सा तक जाता है, इसी प्रकार अवरोह में तार सा से मध्य सा तक आता है।

वर्ण—स्वरों के विभिन्न क्रम अर्थात् चलन को वर्ण कहते हैं। इसके मुख्य चार प्रकार हैं (१) स्थायी वर्ण (२) आरोही वर्ण (३) अवरोही वर्ण और (४) संचारी वर्ण।

सुरावर्त—इसे सरगम भी कहते हैं। राग की चलन के अनुसार स्वरों की लय-तालबद्ध रचना को सुरावर्त कहते हैं। विद्यार्थियों को याद कराने से उन्हें राग की चलन समझ में आ जाती है।

प्रश्न

(१) निम्नलिखित की परिभाषा लिखते हुए सोदाहरण समझाइये—

ततकार, टुकड़ा, सलामी, परन, सम, विभाग, ठेका, तिहाई, कटाक्ष।

(२) निम्नलिखित की तुलना कीजिये—

ताली-खाली, कसक-मसक, आमद-टुकड़ा, ठाह-दुगुन, ताण्डव-लास्य, शुद्ध-विकृत स्वर, आरोह-अवरोह।

मुद्रा

मुद्रा शब्द कई अर्थों में प्रयोग किया जाता है। साधारण व्यवहार में मुद्रा से सिक्का (रुपया) समझा जाता है। वेद-पाठ में मुद्रा का अर्थ हाथों द्वारा संकेत समझा जाता है। नृत्य में भावों को प्रकट करने के लिये शरीर की एक विशिष्ट स्थिति को मुद्रा कहा गया है। नृत्य में मुद्रा का बड़ा महत्व है। इसे नृत्य की भाषा कहा गया है। नृत्य में हाथ के संचालन से मुद्रा की रचना होती है। प्राचीन शास्त्रों में मुद्रा को हस्त या हस्ताभिनय कहा गया है। हाथ-संचालन की दृष्टि से मुद्रा के दो प्रकार हैं—

(१) संयुक्त मुद्रा और

(२) असंयुक्त मुद्रा

संयुक्त मुद्रा—दोनों हाथों के संयोग से जो स्थिति बनती है उसे संयुक्त मुद्रा कहते हैं, जैसे—शंख, कमल, हन्स, कपोत आदि।

असंयुक्त मुद्रा—एक हाथ से जो स्थिति बनती है उसे असंयुक्त मुद्रा कहते हैं, जैसे पताका, अर्धचन्द्र आदि।

हस्त मुद्रायें मुख्य २४ मानी गई हैं। इसके प्रमाण में पं० शार्ङ्गदेव लिखित 'संगीत रत्नाकर' का निम्न उद्धरण प्रस्तुत है—

हस्तपताको मुद्राख्या कटको मुष्टिरित्यपि।
कर्त्तरीमुख संज्ञश्च शुकतुन्ड कपित्थकः॥
हन्सपक्षश्च शिखरो हन्सास्य पुनरन्जति।
अर्धचन्द्रश्च मुकरो भ्रमरः सूचिकामुखः॥
पल्लव स्त्रिपताकश्च मृगशीर्षः हृदयस्तथा।
पुनः सर्पशिरः संज्ञो वर्धमानक इत्यपि॥

अराल ऊणनाभश्च मुकुलः कटकामुखः ।
चतुर्विंश तिरित्यैव कर शास्त्राज्ञ सम्मताः ।।

—संगीत रत्नाकर

अर्थात् हस्तपताका, मुद्राक्ष, कटक, मुष्टि, कर्त्तरीमुख, शुकतुन्ड, कपित्थकः, हन्सपक्ष, शिखर, हंसास्य, अंजलि, अर्धचन्द्र, मुकुर, भ्रमर, सूचीमुख, पल्लव, त्रिपताका, मृगशीर्ष, वर्ध मानक, अराल, ऊर्णनाभ, मुकुल और कटकामुख, ये चौबीस मुद्रायें हैं। इन मुद्राओं का स्वरूप पीछे के चित्र में और इनके द्वारा व्यक्त भावों का स्पष्टीकरण नीचे दिया जा रहा है—

(१) **पताका**—झन्डा, सूर्य, राजा, महल, शीत, ध्वनि आदि।

(२) **त्रिपताका**—सूर्यास्त, सम्बोधन, शरीर, भिक्षा मांगना आदि।

(३) **हन्सपक्षः**—मित्र, पर्वत, चन्द्र, वायु, केश, पुकारना आदि।

(४) **मुद्राक्ष**—सागर, स्वर्ग, मृत्यु, ध्यान, स्मृति, सम्पूर्ण आदि।

(५) **अर्धचन्द्र**—क्यों, कहाँ, आकाश, ईश्वर, प्रारम्भ आदि।

(६) **मुकुर**—किरण, मक्खी, चूड़ी, वेद आदि।

(७) **सूचीमुख**—भौंह, द्रुम, कूदना, संसार, महीना आदि।

(८) हंसास्य—दृष्टि, उज्ज्वल, लाल, काला, पंक्ति आदि ।

(९) शिखर – मार्ग, नेत्र, पैर, चलना, खोजना आदि ।

(१०) ऊर्णनाभ—चीता, घोड़ा, कमल, बर्फ, फल आदि ।

(११) कर्त्तरीमुख—पुरुष, गृह, पाप, ब्राह्मण, शब्द, शुद्धता इत्यादि ।

(१२) मुकुल—वानर, भेड़िया, कोमल आदि ।

(१३) शुकतुण्ड—पक्षी ।

(१४) मृगशीर्ष—हिरण ।

(१५) अंजलि—अग्नि, घोड़ा, शेर, क्रोध, वर्षा, डाली, शेर आदि ।

(१६) वर्धमानक—कानों का कुन्डल, कुआँ, महाव्रत, योगी ।

(१७) पल्लव—भैंस, प्रमाण, शर्त, धुआँ, दूरी, वज्र आदि ।

(१८) कपित्थक—स्पर्श करना, जाल, संदेह, घूमना, पृष्ठ आदि ।

(१९) सर्पशीर्ष—सर्प ।

(२०) कटकमुख—बाँधना, तीर से मारना ।

(२१) कटक—कृष्ण, विष्णु, स्वर्ण, दर्पण, नारी आदि ।

(२२) भ्रमर:—हाथी के कान, छाता, पर, भय आदि ।

(२३) मुष्टि—आज्ञा, मन्त्री, औषधि, वरदान, आत्मा आदि ।

(२४) अराल—वृक्ष, मूर्ख, दुष्ट ।

प्रश्न

मुद्रा किसे कहते हैं ? संयुक्त मुद्रायें कितनी होती हैं, समझाइये ।

□

अंग-संचालन

प्रत्येक नृत्य शैली में अंग-संचालन का बड़ा महत्व है। नृत्य करते समय कभी पैर चलाते हैं तो कभी हाथ या दोनों। इसी तरह गर्दन, भौं, आँख, वक्ष आदि सभी का संचालन होता है। पीछे हाथ के विभिन्न मुद्राओं को समझाया जा चुका है। अब हम शरीर के अन्य अंगों के संचालन पर विचार करेंगे।

पैरों का संचालन—इसे पाद-विक्षेप कहते हैं। इसमें केवल पैरों की विभिन्न क्रियायें ही नहीं आतीं, बल्कि घुंघरू का उचित प्रयोग भी आता है। कमर के नीचे पैर में तीन जोड़ हैं—एड़ी, घुटना, जंघा। इन तीनों जोड़ों से पैर को विभिन्न स्थितियों में रक्खा जा सकता है। पैरों की क्रिया को चारी कहते हैं। चारी के ३० प्रकार बताये गये हैं। चारी के मुख्य दो प्रकार हैं—भूमिचारी और आकाशचारी।

भूमिचारी में दोनों पैर पृथ्वी पर रक्खे रहते हैं। इसके १६ प्रकार माने गये हैं।

आकाशचारी में एक पैर पृथ्वी पर रहता है और दूसरा उठा रहता है।

पैरों में घुँघरुओं का प्रयोग भारतीय नृत्य की विशेषता है। इसके द्वारा नर्तक विभिन्न लयकारी दिखाता हुआ लय से खेलता है और श्रोताओं को आनन्दित करता है। लय प्रकृति का विधान है। इसलिये साधारण श्रोता लय से शीघ्र प्रभावित होते हैं। जानकार लोगों को भी लयकारी में बड़ा आनन्द मिलता है। घुँघरू का जितना काम कथक नृत्य में और विशेपकर जयपुर घराने में होता है, उतना किसी

नृत्य में नहीं होता। घुंघरू द्वारा उचित स्थान पर लयकारी दिखाई जानी चाहिये। पैरों और घुंघरुओं के द्वारा ततकार दिखाया जाता है। रस के अनुसार भी पैरों का संचालन होता है। उदाहरण के लिये शांत और भयानक रसों में पैरों का काम नहीं होता और शृंगार रस में द्रुत काम किया जा सकता है।

नेत्र और भौं-संचालन

नृत्य में नेत्र और भौं-संचालन बड़े महत्व के हैं। गर्दन के ऊपर ठोढ़ी, ओठ, गाल, आँख, भौं, नाक का प्रयोग नृत्य में होता है। इनमें नेत्र और भौं का उचित संचालन बड़ा महत्वपूर्ण है। नेत्र के अन्दर पुतली और उसके बाहर पलकें अपना-अपना काम करती हैं। दाहिने-बायें व ऊपर-नीचे करने से पुतली का अभ्यास होता है। भरत ने आठ प्रकार के दृष्टि-भेदों का वर्णन किया है।

दोनों आँखों के ऊपर कुछ बाल-समूह होते हैं जिन्हें भौं कहते हैं। भावावेश में भौं की आकृति अपने आप बदल जाती है। नृत्य में अभ्यास द्वारा उसके संचालन पर अधिकार प्राप्त किया जाता है। कभी दोनों भौं को उठाना, कभी केवल एक को उठाना, कभी दाहिना सिरा उठाना, तो कभी बाँया सिरा उठाना आदि क्रियाओं द्वारा भौं का अभ्यास होता है। रसों के अनुसार भी भौं और नेत्र का संचालन बदला करता है। कुशल नर्तक आँखों और भौं द्वारा केवल भाव ही व्यक्त नहीं करते, बल्कि लय-ताल भी स्पष्ट करते हैं। भरत मुनि ने नाट्य-शास्त्र में भौं की सात क्रियायें बतलाई हैं।

गर्दन और छाती का संचालन

नृत्य में भौं और नेत्र-संचालन के साथ-साथ गर्दन और छाती का संचालन भी बड़ा महत्वपूर्ण है। कुशल नृत्यकार और शिक्षक इनकी साधना के लिये विशेष अभ्यास कराते हैं। यह कला क्रियात्मक है,

अतः इनका संचालन अच्छे गुरु से सीखना चाहिये और हो सके तो अधिक से अधिक समय तक उनके समक्ष अभ्यास करना चाहिये।

गर्दन चलाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि गर्दन में सख्ती न आये। ऐसा न मालूम पड़े कि गर्दन चलाते समय बहुत अधिक बल लगाना पड़ रहा है। गर्दन में सख्ती आने से माँस-पेशियाँ जकड़ जाती हैं और गर्दन का संचालन अस्वाभाविक हो जाता है, इसलिये गर्दन बिल्कुल हलका रखना चाहिये। ताकत लगाकर गर्दन हिलाना नहीं चाहिये। नृत्य के प्राचीन आचार्यों ने चार प्रकार के ग्रीवा-संचालन बताये हैं।

छाती का प्रयोग शास्त्रीय नृत्य में बहुत कम होता है, क्योंकि इसके संचालन से शृंगारिकता बढ़ती है। छाती ऊपर-नीचे अथवा दायें-बायें हिलाई जा सकती है, किन्तु कम। फिल्मी नृत्यों में इसका प्रयोग अधिक होता है, क्योंकि अधिकांश आधुनिक फिल्मों में अश्लीलता के द्वारा जनता का मनोरंजन किया जाता है, किन्तु शास्त्रीय नृत्य में नृत्यकार इस प्रकार की हरकतें करते ही नहीं और जब करते भी हैं तो मर्यादित रूप में।

प्रश्न

१—कथक नृत्य में शरीर के किन-किन अंगों का सचालन होता है? और किस प्रकार? संक्षेप में समझाइये।

२—कथक नृत्य में पैर, भौं, नेत्र, गर्दन आदि का संचालन किस प्रकार होता है? क्या इनमें सुधार की आवश्यकता है? अपने विचार लिखिये।

नृत्यकार की पोशाक

सफल नृत्य-प्रदर्शन के लिये कई बातों की आवश्यकता होती है। अभ्यास और शिक्षा जितनी आवश्यक है उतनी ही आवश्यक पोशाक और मेकअप (रूप सज्जा) है। साथ ही उत्तम संगति भी होनी चाहिये। मणिपुरी, भरतनाट्यम और कथकलि नृत्यों में संगति के लिये, कथक नृत्य की अपेक्षा, अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। इनके अतिरिक्त रंगमंच की उचित व्यवस्था भी होनी चाहिये। कभी पैरों से चादर सिमटने लगती है, कभी तख्त हिलने लगता है तो कभी रोशनी की व्यवस्था ठीक नहीं होती है जिसके कारण नृत्य का कार्यक्रम असफल हो ज़ाता है, इसलिये इन सब बातों पर भी ध्यान रखना चाहिए। बिना प्रकाश की उचित व्यवस्था के पोशाक और मेकअप प्रभावहीन हो जाते हैं। अतः पोशाक के साथ-साथ स्टेज, प्रकाश और ध्वनि का उचित प्रवन्ध होना चाहिए। नीचे हम कथक नृत्य की वेश-भूषा पर प्रकाश डाल रहे हैं—

पुरुष वेश-भूषा

कथक नृत्य की परम्परागत वेश-भूषा मुसलमानी है। मुगलकाल में नृत्यकारों को विशेष राज्याश्रय मिला, फलस्वरूप नृत्य में शृंगारिक हाव-भाव एवम् मुद्राओं की बहुतायत हो गई और नृत्य की वश-भूषा मुसलमानी हो गई जो अव तक चली आ रही है। इस वेश-भूषा में चूड़ीदार पायजामा और घेरदार बाराबंदी या कुरता पहनते हैं। ऊपर से शेरवानी पहन लेते हैं। सिर में कामदार जरी या साटन की दुपलिया या चुन्नटदार टोपी पहनते हैं। कभी-कभी सिर खाली भी रहता है। इस वेश-भूषा को इस पुस्तक में दिये गये बिंदादीन महाराज के चित्र में देखिये।

कुछ नर्तक कुरते के ऊपर खुले गले का वास्केट भी पहन लेते हैं और एक कन्धे से लेकर कमर तक तिरछा दुपट्टा बाँध लेते हैं।

कथक नृत्य की दूसरी पोशाक में कामदार या सादी धोती पहनते हैं। कमर के ऊपर का भाग खुला रहता है और दोनों जंघों पर एक दुपट्टा रहता है। यह वेश-भूषा मुगलों के पहले की मालूम पड़ती है और कृष्ण की वेष-भूषा के समीप है। कृष्ण की भूमिका में इसी वेष-भूषा को पहनते हैं और उस समय सिर पर मुकुट लगा लेते हैं। इस पुस्तक में दिये गये बिरजू महाराज और शम्भू महाराज का चित्र इसी वेष-भूषा में हैं।

स्त्री वेश-भूषा

कथक नृत्य के लिए स्त्रियों की वेश-भूषा साड़ी और ब्लाउज है। साड़ी उल्टे पल्ले की होती है। यह उत्तर प्रदेश और बंगाल की स्त्रियों के पहनावे के समान है। स्त्रियाँ धोती के नीचे चूड़ीदार पायजामा पहनती हैं, क्योंकि चक्कर लगाने के लिये धोती बहुत उचित वस्त्र नहीं है। सुश्री दमयन्ती जोशी का चित्र इसी वेष-भूषा में है।

स्त्रियों की दूसरा पोशाक चूड़ीदार पायजामा और घेरदार कुरता है। स्त्रियों का कुरता पुरुषों की तुलना में अधिक नीचा होता है। कुरता के ऊपर दुपट्टा होता है जिससे वक्ष को ढक लेते हैं।

स्त्रियों का तीसरा पोशाक लँहगा, अँगिया और चुनरी होती है। लँहगा के नीचे चूड़ीदार पायजामा पहनती हैं।

नर्तक के सामने अपने लिये उपयुक्त पोशाक चुनने की समस्या आती है। इसके लिये कोई विशेष नियम नहीं बनाये गये हैं। नृत्य के भाव और समय के अनुसार पोशाक होनी चाहिये। कलाकार स्वयं अपनी रुचि के अनुसार वस्त्रों का रंग चुनता है।

वस्त्र के रंगों का चुनाव

उपयुक्त पोशाक चुनने के बाद नर्तक के समक्ष वस्त्रों के रंग की समस्या आती है कि वह किस रंग का पोशाक पहने। वस्त्रों के रंगों का मिलान साधारणतया दो प्रकार का होता है—मेल खाते हुए रंग और विरोधी रंग। चूड़ीदार पायजामा तो सदैव सफेद रहता ही है। इसके अतिरिक्त ऊपर-नीचे के वस्त्रों और दुपट्टा में रंगों का मिलान रक्खा जाता है। रंगों का मिलान देश-काल के अनुसार जैसा फैशन हो वैसा चुनना चाहिये, वस्त्र प्राकृतिक और सादे होने चाहिये जिनका प्रभाव दर्शकों पर अच्छा पड़ता है। वस्त्र ऐसे न हों कि या तो नर्तक का व्यक्तित्व उनसे छिप जाय और या दर्शक केवल उनकी चमकीली कामदार या रंग-बिरंगे वस्त्र ही देखते रहें और या बिना उचित वस्त्र के नर्तक का व्यक्तित्व ही निखर न सके।

वस्त्रों की फिटिंग

केवल वस्त्रों का चुनाव और रंग ही आवश्यक नहीं है, बल्कि उनकी सिलाई और फिटिंग भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। आज के नवीनतम फैशन के अनुसार वस्त्र इतने चुस्त न होने चाहिये कि अंग संचालन में कठिनाई हो। उसकी फिटिंग भी ऐसी न होनी चाहिये कि अश्लील मालूम पड़े। फिल्मी नृत्यों में तो अश्लीलता थोड़ी-बहुत आ ही जाती है, किंतु शास्त्रीय नृत्य में अश्लीलता नहीं आनी चाहिये।

सिल्क, जारजेट, नाइलोन आदि के कपड़े इस दृष्टि से अच्छे समझे जाते हैं, क्योंकि इनमें सिकुड़न नहीं आती और सूक्ष्म से सूक्ष्म अंग-संचालन दर्शक देख सकते हैं।

आभूषण

स्त्रियों के लिए आभूषण की समस्या आती है। साधारणतः स्त्री नर्तकियाँ माला, अँगूठी, कंगन, नेकलस, भुजबंध, टीका, लाकेट आदि

आभूषण पहनती हैं। इनका उचित चुनाव भी आवश्यक है। आभूषण इतने अधिक न हों कि अंग-संचालन में कठिनाई हो। वे जो भी हों साधारण तथा ठीक से बँधे हो। नृत्य में बाधक न हों। फूलों के आभूषण भी पहने जाते हैं। ये हल्के होते हैं और थोड़ी बहुत सुगन्धि फैलाकर वातावरण रसमय कर देते हैं।

नाट्यशास्त्र और संगीत रत्नाकर में नर्तकों की वेष-भूषा पर विस्तार में प्रकाश डाला गया है। इनमें इस बात पर वल दिया गया है कि भाव के अनुसार पोशाक होनी चाहिये जिससे कि अंग संचालन स्पष्ट दिखाई दे सके और नर्तक का सौन्दर्य निखर सके। नाट्यशास्त्र में प्रत्येक अंग के सौन्दर्य का वर्णन किया गया है।

प्रश्न

(१) कथक नृत्य में पुरुषों और स्त्रियों की वेश-भूषा क्या होती है ? यह कहाँ तक उचित है ? अपने विचार लिखिये।

(२) सफल नृत्य-कार्यक्रम के लिये रंगमंच की व्यवस्था किस प्रकार होनी चाहिये ? समझाइये।

रूप-सौन्दर्य

वस्त्र और आभूषण के साथ-साथ नर्तक को रूप सौन्दर्य (मेकअप) का भी ध्यान रखना पड़ता है। आजकल मेकअप की अनेक सामग्रियाँ उपलब्ध हैं, जिनसे एक ओर रूपसज्जा अच्छी होती है और दूसरी ओर सरल, किन्तु मेकअप ऐसी न होनी चाहिये कि नर्तक का व्यक्तित्व बिल्कुल छिप जाय और अस्वाभाविक लगे। भरत ने नाट्यशास्त्र में रूप-सौन्दर्य पर विस्तार में प्रकाश डाला है और शरीर के विभिन्न अंगों की सुन्दरता बढ़ाने के साधन बताये हैं। नीचे शरीर के विभिन्न अंगों के रूप-सौन्दर्य पर संक्षेप में प्रकाश डाला जा रहा है—

चेहरा—चेहरा को हल्के गरम पानी से धोकर कपड़े से पोंछिये। इसके बाद हल्का तेल लगाकर पुनः चेहरे को साबुन से धोइये। इसके बाद चेहरे को अच्छी तरह से पोंछकर स्नो या फाउन्डेशन क्रीम लगाइये और उसके ऊपर पावडर लगाइये। फाउन्डेशन क्रीम लगाने पर पसीना से पावडर नहीं बहता। पफ से पावडर लगाना चाहिये। चेहरे के अतिरिक्त गर्दन, नाक तथा आँख के चारों ओर पावडर लगाना चाहिये। पावडर अधिक समय तक नहीं चलता, अतः २-२ घन्टों के बाद पुनः लगा लेना चाहिये।

होंठ—सर्वप्रथम होंठ को किसी वस्त्र से पोंछ लीजिये और उस पर हल्की क्रीम लगाइये। इसके बाद लिपिस्टिक ब्रुश द्वारा होठों के ऊपर नीचे रेखा बना लीजिये और इन रेखाओं के बीच लिपिस्टिक लगाइये। लिपिस्टिक के कई प्रकार मिलते हैं। नर्तक अपनी-अपनी रुचि के अनुसार शेड चुनते हैं। लिपिस्टिक लगाने के बाद होठों को जीभ से चाटना नहीं चाहिये।

केश—सर्वप्रथम बालों को शैम्पू या रीठे से धो लेना चाहिये। इससे बाल मुलायम हो जाते हैं। कुछ नर्तकियां जूड़े बनाती हैं और कुछ चोटी। बालों में सफेद फूल लगाती हैं। कुछ माथे पर बालों का घुमाव दे देती हैं। कमर से नीची चोटी अच्छी लगती है, अतः जिनकी चोटी छोटी होती है वे नाइलोन के बालों द्वारा अथवा काले धागे की चोटी द्वारा उसे बढ़ा लेती हैं।

आँख—नेत्रों में हल्का काजल लगाते हैं। पेन्सिल से भौं की गति बनाते हैं। भौंहें पतली होनी चाहिये जो स्वाभाविक है।

कपोल—गालों के बीच में हल्की लाली लगाकर उसे अँगुलियों से रगड़कर पावडर से मिलाना चाहिये जिससे लाली अस्वाभाविक न लगे। लाली अच्छे स्वास्थ्य की परिचायक है।

नाखून—हाथ के बढ़े हुये नाखून नर्तक की शोभा बढ़ाते हैं, किंतु इन्हें भी सँवारने की आवश्यकता होती है। नाखून पर नेल पालिश लगाते हैं। लिपिस्टिक की तरह नेल-पालिश के भी कई प्रकार (शेड) मिलते हैं। नर्तक अपनी इच्छा के अनुसार शेड चुन लेता है। नेल-पालिश लगाने के पहले नाखून को साबुन से अच्छी तरह धोकर कपड़े से पोंछ लेना चाहिये और सावधानी से ब्रुश द्वारा नेल-पालिश लगानी चाहिये। बहुत अधिक पालिश नहीं लगानी चाहिये। पालिश द्वारा नाखून पर विभिन्न डिजाइनें भी बनाते हैं, किन्तु सादी डिजाइन अधिक प्रचार में है। सुन्दरता के लिये नर्तक हाथ के नाखून बढ़ाते हैं और बढ़ी हुई नाखून को नोंकदार काटते हैं। नाखून की लम्बाई अँगुलियों की लम्बाई के अनुपात में होनी चाहिये। लम्बी अंगुलियों के साथ लम्बे नाखून शोभा नहीं देंगे।

मेंहदी का प्रयोग—लाल रंग आँखों को अच्छा लगता है और शुभ भी माना जाता है। नर्तक हाँथ और पैर के तलुवे में मेंहदी लगाते हैं। कभी-कभी मेंहदी के स्थान पर सुर्ख लाल रंग प्रयोग करते हैं।

हाँथ की हथेली पर मेंहदी द्वारा विभिन्न डिजाइन भी बनाते हैं।

इनके अतिरिक्त मालिश, उबटन, स्नान, भोजन आदि के उचित प्रयोग से शारीरिक सौंदर्य में वृद्धि होती है।

घुंघरू—भारत के प्रत्येक नृत्य में घुंघरुओं का प्रयोग होता है। अन्य किसी भी विदेशी नृत्य में इनका प्रयोग नहीं होता। साधारण विद्यार्थी के लिये प्रत्येक पैर में सौ-सौ घुंघरू होने चाहिये। बाद में ढाई-ढाई सौ तक हो सकते हैं। नादकेश्वर ने 'अभिनय दर्पण' ग्रंथ में बताया है कि घुंघरू कांसे की बनी होनी चाहिये, किन्तु आजकल पीतल के घुंघरुओं का अधिक प्रचार है। घुंघरू समान आकार के तथा सुन्दर होने चाहिये। इनकी ध्वनि भी लगभग समान होनी चाहिये। अतः घुंघरुओं को खरीदते समय सावधानी की आवश्यकता होती है।

नृत्य के शास्त्रकारों ने घुंघरुओं को धागे में बाँधे जाने का विधान बताया है और धागे का रंग नीला बताया गया है। उन्होंने बताया कि १-१ अंगुल की दूरी पर धागे में गाँठ लगाकर घुंघरू फँसा देना चाहिये। कभी-कभी कुछ घुंघरुओं में नोक निकले रहते हैं, उन नोकों को घिस कर चिकना कर लेना चाहिये। पैरों में घुंघरू मजबूती से बाँधे जाने चाहिये। ऐसा न हो कि नृत्य करते समय घुंघरू खुलने लगे और या इतनी सख्ती से बँधा हो कि पैर कटने लगे। खुलने के ही डर से विद्यार्थियों के लिये अब चमड़े की पट्टी में लगे हुए घुंघरू बनाये जाने लगे हैं।

प्रश्न

(१) कथक नृत्य में किन-किन अंगों का शृंगार किया जाता है और किस प्रकार? समझाइये।

कथक नृत्य के प्रदर्शन का क्रम

कथक नृत्य में नृत्यकार के अतिरिक्त कुछ और कलाकार भी होते हैं, जो नृत्यकार की सहायता करते हैं। कम से कम एक व्यक्ति लहरा बजाता है और दूसरा तबला से संगति करता है। कभी-कभी एक से अधिक व्यक्ति भी लहरा देते हैं—एक हारमोनियम पर लहरा देता है तो दूसरा सारंगी पर अथवा तीसरा वाइलिन पर उसी लहरे की रचना बजाता है। कथक नृत्य में लहरा देने के लिये सारंगी अधिक उपयुक्त समझी जाती है। एक कलाकार तबले पर संगति करता है। जब कोई विद्यार्थी नृत्य करता है तो अधिकतर उसके शिक्षक तबले पर संगति करते हैं, जो तबला-संगति करने के साथ-साथ नृत्य के बोल भी पढ़ा करते हैं। इससें विद्यार्थी नर्तक को बड़ी सहायता मिलती है। विद्यार्थी के नृत्य-प्रदर्शन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिये शिक्षक महोदय नृत्य के साथ-साथ तबला के बोल भी बजाते रहते हैं। प्रदर्शन के समय यह क्रिया उचित हो सकती है, किन्तु विद्यार्थी को अभ्यास कराते समय सीधा ठेका बजाना चाहिये। इससे वह भविष्य में दूसरों पर आश्रित नहीं रहेगा।

नृत्य प्रारम्भ होने के पहले, सर्वप्रथम लहरा जिसे नगमा भी कहते हैं, शुरू किया जाता है। इसके बाद तबलिया एक या दो तिहाईदार उठान या चक्करदार टुकड़ा बजाकर सम पर आता है। इसके बाद नर्तक मन्च पर आता है। वह अपने गुरू तथा अन्य संगति वाले कलाकारों को प्रणाम करता है और एक सुन्दर सी मुद्रा में खड़ा हो जाता है। इसके बाद वह आमद और निकास दिखाता है और विभिन्न भाव की मुद्रा में खड़ा होता है। कथक नृत्य की आरम्भिक क्रिया को ठाट

कहते हैं। इस समय तबलिया सीधा-सीधा ठेका लगाता है और जब आवश्यकता होती है तो नर्तक के साथ अथवा अलग छोटे-छोटे मोहरे अथवा तिहाई लगाकर सम पर आ जाता है। नर्तक दर्शकों के सम्मुख विभिन्न ठाट प्रस्तुत करता है। इसके पश्चात् नर्तक सलामी का टुकड़ा नाचता है। सलामी मुगल-कालीन परम्परा है। जब नर्तक दरबार में नृत्य करता था तो उसे नृत्य के किसी एक टुकड़े के माध्यम से राजा अथवा नवाब को सलाम करना पड़ता था। अब राजे-महाराजे नहीं रहे, अतः यह परम्परा भी धीरे-धीरे कम होती जा रही है। अब सलामी का टुकड़ा नाचना आवश्यक नहीं रहा है। किन्तु कुछ नर्तक अभी भी सलामी का टुकड़ा नाचते हैं। सलामी में नमस्कार करने की हिन्दू और मुसलमानी शैलियाँ अलग-अलग हैं।

इसके बाद कुछ नर्तक साधारण श्रोता पर अच्छा प्रभाव डालने के लिये थोड़ा ततकार दिखा देते हैं। वास्तव में ततकार नृत्य के अन्तिम भाग में दिखाया जाता है और अच्छे नर्तक ऐसा करते भी हैं। शास्त्रीयता की दृष्टि से इस स्थान पर ततकार दिखाना उचित नहीं है।

ततकार के बाद नर्तक तोड़े और परन प्रस्तुत करता है। कभी-कभी वह किसी तोड़े को ताल देकर पढंत करता है और फिर उन्हें नाचकर दिखाता है। विभिन्न लय में तिहाईदार अथवा तिहाई रहित तोड़ों को अंग संचालन और ततकार द्वारा प्रदर्शित करता है जिससे दर्शकों को अधिक आनन्द मिलता है। नर्तक विभिन्न प्रकार के टुकड़े-तोड़े नाचता है और तब तबलिया साथ-साथ उसी प्रकार के बोल बजाता चलता है। कभी-कभी नर्तक आघात-अनाघात दिखाता है, तबलिया भी वैसा जवाब देता है।

इसके बाद कवित्त की बारी आती है। नर्तक ब्रज भाषा में रचित कवित्त को ताल देकर सुनाता है और फिर विभिन्न मुद्रा व अंग-संचालन द्वारा भाव प्रदर्शित करता है। लखनऊ घराने के नर्तक कवित्त के

साथ-साथ ठुमरी गाते हैं और उसके प्रत्येक शब्द का भाव अलग-अलग ढंग से दिखाते हैं।

कवित्त के पश्चात गत और गतभाव की बारी आती है। इस समय लय थोड़ी बढ़ा दी जाती है। तबलिया सीधा ठेका देने लगता है। नर्तक गत में नृत्य की विभिन्न गति दिखाता है और गतभाव में अंग-संचालन और मुद्रा द्वारा किसी कथा के भाव को प्रदर्शित करता है। माखन चोरी, कालिया दहन, रासलीला आदि गतभाव प्रचार में अधिक है। एक कथानक के समाप्त होने पर वह एक छोटा-सा टुकड़ा लेकर सम पर आता है। यह इस बात का परिचायक है कि एक कथानक समाप्त हो गई है।

इसके बाद लय द्रुत कर दी जाती है और तब ततकार की बारी आती है। नर्तक अपनी अधिकतम द्रुत लय में ततकार दिखाता है और तबलिया संगति करता है। यहाँ पर तबलिया के तैयारी की परख हो जाती है। द्रुत ततकार से एक समा सी बँध जाती है और श्रोता स्तब्ध हो जाते हैं। कभी-कभी नर्तक पैरों का संचालन करते हुये भी घुँघरुओं की आवाज बहुत धीमी कर देता है और थोड़ी देर बाद फिर पहले की तरह तेज कर देता है। इससे श्रोताओं को बड़ा आनन्द मिलता है और वे करतल ध्वनिं करने लगते हैं। कभी-कभी इस स्थान पर नर्तक और तबलिया में जवाब सवाल होता है। जैसा-जैसा नर्तक पैरों द्वारा दिखाता है तबलिया तबले पर दिखाता है। तबलिये की तैयारी और सतर्कता की परख होती रहती है। काफी देर के बाद नर्तक और-तबलिया जब करीब थक से जाते हैं तो नर्तक तिहाई अथवा नौहक्का की तिहाई लेकर अपना नृत्य समाप्त करते हैं।

प्रश्न

१—किसी संगीत-कार्यक्रम का विवरण देते हुये उसमें हुये किसी कथक नृत्य के क्रम का विवरण लिखिये।

रस और भाव

नृत्य में भाव का बड़ा महत्व है। बिना भाव के नृत्य निरर्थक है। इसीलिए भरत ने कहा है कि भावानुकूल शरीर की अवस्था को नृत्य कहते हैं।

भाव से रस की उत्पत्ति होती है, इसलिए इसे भाव के आधीन माना गया है। मनुष्य के मानसिक स्थिति को भाव कहते हैं। भाव जागृत होकर रस की सृष्टि करते हैं। प्रत्येक भाव में कोई न कोई रस अवश्य होता है। दर्शकों में रसमय अवस्था उत्पन्न करना कलाकार का लक्ष्य होता है और जो कलाकार जितनी जल्दी इस अवस्था को उत्पन्न करने में समर्थ होता है वह उतना ही उच्च श्रेणी का कलाकार समझा जाता है।

भरत मुनि ने नाट्य में ८ रस माने हैं, किन्तु काव्य में इन रसों की संख्या ९, १० और ११ तक मानी गई है। भरत मुनि द्वारा बताये गये रसों के नाम हैं—शृंगार, करुण, वीर, भयानक, हास्य, रौद्र, वीभत्स और अद्भुत। इनमें शान्त रस जोड़कर रसों की संख्या ९, वात्सल्य रस जोड़कर १० और भक्ति रस जोड़कर इनकी संख्या ११ मानी गई है। प्रत्येक रस के साथ एक स्थायी भाव जुड़ा होता है जो विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से पोषित होता है। नीचे मुख्य रसों के नाम और उनसे सम्बद्ध स्थायी भाव बताये जा रहे हैं—

(१) शृंगार रस के साथ रति स्थायी भाव
(२) करुण „ शोक „
(३) वीर „ उत्साह „

(४) भयानक	इसके साथ	भय	स्थायी भाव
(५) हास्य	,,	हास्य	,,
(६) रौद्र	,,	क्रोध	,,
(७) वीभत्स	,,	घृणा	,,
(८) अद्‌भुत	,,	विस्मय	,,
(९) शान्त	,,	निर्वेद	,,

इन भावों के अतिरिक्त ३३ संचारी भाव हैं जो भाव को पुष्ट करते हैं। इनके नाम हैं—निर्वेद, शंका, ग्लानि, श्रम, जड़ता, घृति, हर्ष, दैन्य, औग्रय, चिंता, त्रास, ईर्षा, गर्व, आमर्ष, स्मृति, मरण. सुक्त, मद, निद्रा, विवाद, व्रीणा (लाज), अपस्मार (पागलपन), मोह, मति, आलस्य, आवेग, तर्क, अवहित्था (झेंप), व्याधि, उन्माद, विषाद, उत्सुकता तथा चापल्य।

रस के अनुसार मनुष्य का वाह्य रूप बदला करता है। जैसे श्रृंगार रस में चेहरे पर सौन्दर्य, आँखों में मस्ती और आधी खुली हुई, करुण रस में चेहरे पर शोक और दृष्टि गिरी हुई, भयानक रस में चेहरे पर भय, आँखें खुली हुई, भौं ऊपर, शरीर स्थिर, मुँह खुला हुआ, वीर रस में आँखों में तेज और गर्व, हाथ फड़कते हुये, रौद्र रस में लाल आँखें, दाँतों के नीचे होंठ, माथे पर वक्र रेखायें, हास्य रस में नेत्रों में चंचलता, वीभत्स रस में नेत्रों में घृणा की भावना, भौं, नाक और मस्तक पर सिकुड़न, अद्‌भुत रस में चेहरे पर आश्चर्य की भावना और नेत्र साधारण से अधिक खुले हुये, शान्त रस में चेहरे में स्थिरता, आँखें नीची और नाक, भौं व मस्तक अपने स्वाभाविक स्थिति में रहते हैं।

प्रश्न

१—कथक नृत्य में रस और भाव का क्या सम्बन्ध है ? समझाइये।

नर्तक के गुण-अवगुण

प्राचीन नृत्य के आचार्यों ने पात्र-लक्षण के अंतर्गत नर्तक के गुण-दोष बताये हैं। आचार्य नन्दिकेश्वर ने अभिनय दर्पण में नर्तकी के मुख्य १० गुण बताये हैं जैसे—चपलता, स्थिरता, भ्रमरी में प्रवीणता, तीक्ष्ण स्मरण शक्ति वाली, कला में श्रद्धा, गायन में कुशलता आदि। नीचे नर्तक के वर्तमान गुणों पर प्रकाश डाला जा रहा है—

(१) शारीरिक सौन्दर्य—नर्तक अथवा नर्तकी का प्रथम गुण सुन्दरता है। यहाँ सुन्दरता का अर्थ प्राकृतिक सौंदर्य से है। मेकअप (रूप-सौंदर्य) और अच्छे वस्त्रों से सुन्दरता में वृद्धि होती है, पैदा नहीं होती। प्राकृतिक सौंदर्य एक ऐसी आधार-भूमि है जिस पर नर्तक की सफलता बहुत कुछ आधारित है। सुन्दरता से मतलब केवल शरीर का गोरा होना मात्र नहीं, बल्कि सुडौल और आकर्षक शरीर है। नाक, ओंठ, नेत्र, मुखाकृत, लम्बाई, दांत, अँगुलियाँ आदि शरीर की सुन्दरता में सहायक होते हैं। साधारण कद, बड़े नेत्र, पतले होंठ, लम्बी और पतली अँगुलियाँ आदि शारीरिक सौंदर्य की वृद्धि करते हैं। कुरूप व्यक्ति अच्छा शिक्षक बन सकता है, सफल नर्तक नहीं।

(२) स्वस्थ शरीर—केवल सुन्दर शरीर से काम पूरा नहीं होता, उसे निरोगी और स्वस्थ होना चाहिये। नृत्य में नर्तक की अच्छी कसरत हो जाती है। बिना स्वस्थ शरीर के वह ठीक प्रकार से अभ्यास नहीं कर सकता। अतः स्वस्थ शरीर नर्तक का दूसरा गुण है।

(३) अच्छी शिक्षा—सुन्दर और स्वस्थ शरीर के बाद उसे किसी अच्छे नृत्यकार से नृत्य की शिक्षा मिलनी चाहिये। एक ओर गुरू अच्छा नृत्यकार हो और दूसरी ओर वह उसे सिखाने में रुचि ले। प्रायः ऐसा देखने में आया है कि अच्छे कलाकार सिखाने में बहुत कम रुचि लेते हैं। अच्छे गुरू से सीखा हुआ व्यक्ति सफल नर्तक हो सकता है।

(४) उचित अभ्यास—प्राकृतिक सौंदर्य और अच्छे गुरु मात्र से काम पूरा नहीं होता। नर्तक को सीखी हुई चीजों का खूब अच्छा अभ्यास करना चाहिये। जिससे एक ओर उसे नृत्य के अवयवों पर और दूसरी ओर अपने अंगों पर पूर्ण नियंत्रण हो सके।

(५) लयकार—नृत्य में लय का बड़ा महत्व है। अतः सफल नर्तक को लय और ताल पर अच्छा अधिकार होना चाहिये। उसके तोड़े आदि ठीक स्थान से उठें और ठीक स्थान पर खतम हों।

(६) मादक वस्तु का सेवन नहीं—बहुधा नर्तक किसी मादक वस्तु जैसे शराब आदि का प्रयोग कर लेते हैं। धीरे-धीरे उनकी आदत पड़ जाती है। फलस्वरूप उनका नृत्य दिन प्रति-दिन कम होने लगता है, अतः सफल नर्तक को किसी मादक वस्तु का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

(७) आत्म-विश्वास—उपर्युक्त बातों के साथ-साथ नर्तक में अपनी शिक्षा और अभ्यास के प्रति आत्मविश्वास होना चाहिये। रंग-मंच पर आत्म-विश्वास को खो देने से उसे जो कुछ भी याद नहीं रहता है, भूल जाता है।

(८) वाणी की स्पष्टता—रंगमंच पर बोल पढ़ने की परम्परा प्राचीन है। इस क्रिया से श्रोता उस बोल की सूक्ष्मता को समझ लेते हैं, अतः उसकी वाणी स्पष्ट और आकर्षक होनी चाहिये।

इन गुणों की उलटी बातें अवगुण हैं, जैसे—कुरूप, कुबड़ी, ठिगनी या बहुत लम्बी, बहुत मोटी या बहुत दुबली आदि और अस्वस्थ शरीर, उचित शिक्षा और अभ्यास की कमी, लय-ताल में न होना, मादक वस्तु का प्रयोग करना, आत्म विश्वास की कमी, अस्पष्ट वाणी आदि नर्तक के अवगुण हैं। सफल नर्तक बनने के लिये इनसे दूर रहना चाहिये।

प्रश्न

१—नर्तक के गुण-अवगुणों का उल्लेख कीजिये।

नायक-नायिका भेद

शास्त्रकारों ने पुरुष और स्त्री नर्तकों में भेद किये हैं, जिसे नायक-नायिका भेद कहते हैं। इनका वर्णन सर्वप्रथम भरत ने नाट्यशास्त्र में और बाद के अन्य ग्रन्थकारों ने किया है। स्वभाव, धर्म, जाति, आयु आदि की दृष्टि से इनका वर्गीकरण किया गया है। मुगल काल में जब स्त्री और सुरा मनोरंजन के प्रमुख साधन थे, पावन नृत्य में अश्लीलता आ गई। नायिका भेद में अश्लील कविताओं और भावों का सहारा लिया गया। कथक नृत्य में नायक-नायिका भेद का बड़ा महत्व है। इसलिये संक्षेप में इन पर विचार किया जा रहा है :—

नायक-भेद

स्वभाव की दृष्टि से नायक के चार प्रकार माने गये हैं—

१—धीरोद्धत
२—धीरोदात्त
३—धीरललित
४—धीरप्रशांत

धीरोद्धत—जो नायक घमन्डी और छली होता है, वह धीरोद्धत कहलाता है, जैसे कंस, रावण आदि।

धीरोदात्त—जो नायक विनम्र, दृढ़ संकल्प और शीतल स्वभाव का होता है, धीरोदात्त कहलाता है। शोक-क्रोध आदि से उसका मानसिक सन्तुलन खराब नहीं होता।

धीरललित—जो नायक कला प्रेमी, गम्भीर और मृदु स्वभाव का होता है धीरललित की श्रेणी में आता है।

धीरप्रशांत—यह उच्च श्रेणी का नायक समझा जाता है। इसमें सात्विक गुणों की प्रधानता होती है। सात्विक गुण आठ माने गये हैं, माधुर्य, शोभा, गांभीर्य, विलास, धैर्य, लालित्य, तेज तथा औदार्य।

नायिका-भेद

नायिका के भी भेद कई दृष्टि से किये गये हैं, जैसे—धर्म, आयु, जाति, प्रकृति, परिस्थिति, स्वरूप आदि।

धर्म की दृष्टि से नायिका के तीन प्रकार माने गये हैं—

१—स्वकीया
२—परकीया
३—गणिका

स्वकीया—जो नायिका अपने पति को प्रसन्न करने के लिये नृत्य करती है वह स्वकीया कहलाती है। स्वकीया नायिका चरित्रवती तथा पतिव्रता होती है। उसका नृत्य केवल उसके पति तक सीमित रहता है। इसके तीन भेद हैं—मुग्धा, मध्या और प्रगल्भा।

परकीया—जो नायिका कला प्रेमी होती है और कला को बनाये रखने हेतु नृत्य करती है परकीया कहलाती है।

इसके दो भेद हैं—ऊढ़ा और अनूढ़ा। ऊढ़ा नायिका विवाहिता होती है और अनूढ़ा अविवाहिता होती है।

गणिका—जो नायिका केवल धन के लिये नृत्य करती है और दूसरों का मनोरंजन करती है गणिका या वेश्या कहलाती है। धन के लिये झूठा प्रेम दर्शाती है। स्पष्ट है कि ऐसी नायिकायें समाज में अच्छी नहीं समझी जातीं।

कवित्त और ठुमरी

कत्थक नृत्य में कवित्त पढ़ने और उसका भाव दिखाने की प्राचीन परम्परा है। रीतिकाल में राधा-कृष्ण से सम्बन्धित ब्रज भाषा में अनेक शृंगारिक पदों की रचना हुई। मुगलकाल में बादशाहों की शृंगारिका अपनी चरम सीमा पर पहुँची। अध्यात्मिकता समाप्त हुई और पदों के स्थान पर ठुमरियों की रचना होने लगी। ऐसी कोई नायिका नहीं जिसका कोई चित्रण ठुमरी में न हुआ हो। जादू भरे तोरे नैन, पी की बोली न बोल, अबकी सावन घर आ जा आदि ठुमरियों के उदाहरण हैं। ठुमरी के प्रत्येक शब्द का भाव विभिन्न प्रकार से दिखाते हैं। लखनऊ घराने के नर्तक इस कला में बड़े निपुण हैं। शम्भू महाराज, बिरजू महाराज, सितारा देवी आदि किसी ठुमरी को गाकर ऐसा सुन्दर भाव दिखा देते हैं कि देखते ही बनता है। नीचे एक ठुमरी में राधाकृष्ण की होली का वर्णन किया गया है—

सुनो जी सुनो न डारो मोह पै रंग,
मग चलत बिहारी मैं कह-कह हारी,
न सुहावे गिरधारी मोहे ऐसी ढंग।
कुंवर श्याम पनघट पै न आया करो,
डगर चलत पिचकारी न चलाया करो,
होरी के दिनन जब आवेंगे लँगर,
खेलूं तोरे संग॥

आगे की ठुमरी में एक बिरहिन का चित्रण किया गया है, जिसमें कोयल की मधुर ध्वनि उसके हृदय की व्यथा को बढ़ा देती है।

कोयलिया मत कर पुकार,
करेजवा लागे कटार।

मधुर - मधुर तोरे बैन,
बिरहिन के हरत चैन।
भर - भर आवत हैं नैन,
हूक उठत बार - बार।

राधा-कृष्ण के रास नृत्य से सम्बन्धित कवित्त का एक उदाहरण नीचे देखिये—

नूपुर कंकन, किंकिन, करतल मन्जुल मुरली।
ताल, मृदंग, उपंग, चंग एकहि सुर जुरली॥
मृदुल मुरज टंकार, तार झंकार मिली धुनि।
मधुर जन्त्र के तार, भवर कुञ्जार रली पुनि॥
तैयिस मृदु पट पटकनि, चटकनि करतारन की।
लटकनि, मटकनि, झलकनि कल कुंडल हारन की॥
हार हार में उरझि, उरझि बहियाँ में बहियाँ।
नील पीत पट उरजि बेसर नथ महियाँ॥

प्रश्न

कथक नृत्य में ठुमरी और कवित्त का क्या उपयोग है? सोदाहरण समझाइये।

लहरा

इसे उर्दू में नग़मा कहते हैं। उत्तर भारतीय संगीत की यह विशेषता है कि नृत्य के साथ हारमोनियम, सारंगी अथवा वाइलिन पर लहरा बजाया जाता है। लहरा एक आवृत्ति का होता है। इसकी उपयोगिता यह है कि नर्तक, तबलिया तथा दर्शक को यह मालूम होता रहे कि किसी भी समय कौन सी मात्रा चल रही है। जब कभी नर्तक मुक्त रूप से नृत्य करता है तो तबलिया उसकी वैसी ही संगति करता है और लहरे के सहारे दोनों सम पर या अन्य किसी भी मात्रा पर आते हैं।

भिन्न-भिन्न ताल के अलग-अलग लहरे होते हैं, क्योंकि लहरा में भी ताल के समान ही विभाग होते हैं जो बहुत स्पष्ट होते हैं, जैसे तीनताल के लहरे में चार-चार मात्राओं के चार विभाग होते हैं और झपताल के लहरे में दो-तीन, दो-तीन के ४ विभाग होते हैं। एकताल और चारताल के लहरों में यद्यपि एक सा विभाग होता है, किन्तु दोनों की प्रकृति अलग-अलग होती है।

नीचे प्रयोग में आने वाले विभिन्न राग और ताल में कुछ लहरों की स्वरलिपि दी जा रही है—

तीनताल

(१) राग चन्द्रकौंस—

ग	म	ध	नि	सां	—	सां	सां	नि	ध	नि	सां	(नि)ध	म	ग	सा
३				x				२				०			

(२) राग खमाज—

ग - ग सा | ग म प ध | म - म प | गम रेग सारे नि़सा
× २ ० ३

(३)

सा रे म प | ध॒ - ध॒ प | प - प ध॒ | म प मग म
३ × २ ०

(४) तिलक कामोद —

प़ - नि़ सा | रे ग - सा | रे म प ध | म ग नि़ सा
× २ ० ३

(५) राग मधुवन्ती—

नि़ सा ग॒ मं | प - - प | ग॒ - मं प | ग॒ रे - सा
३ × २ ०

(६) राग देश—

रे म प नि | सां - - रें | नि॒ ध प ध | म ग रे ग
३ × २ ०

(७) राग जयजयवन्ती—

नि़ सा ध़ नि़॒ | रे - - सा | रे ग म गम | रे ग॒ रे सा
३ × २ ०

(८) राग केदार—

म - मग | प - मं प | मं प ध प | म - रे सा
× २ ० ३

(९) राग खम्बावती—

रे म प ध | सां - नि̱ ध | म - प ध | म ग म सा
३   ×   २   ०

(१०) राग वृन्दावनी सारंग—

सां - नि̱ प | म रे नि̣ सा | रे - रे सा | रे म प नि
०   ३   ×   २

झँपताल

(१) राग दुर्गा—

प - | मप ध प | म - | रे ध̣ सा
×   २   ०   ३

(२) राग हंसकिंकणी—

ग सा | ग म प | ग̱ - | रे नि̣ सा
×   २   ०   ३

(३) राग जयजयवन्ती—

रे रे | सा - रे | नि̣ सा | ध̣ नि̱̣ प̣
×   २   ०   ३

(४) राग खमाज—

नि नि | सां - रें | नि सां | नि̱ध प ध
×   २   ०   ३

(५) वृन्दावनी सारंग—

रे रे | सा – सा | रे म | पनि पम रेसा

× २ ० ३

(६) राग केदार—

म म | प – प | मं प | म रे सा

× २ ० ३

एकताल

(१) राग केदार—

म – | प मं | ध प | म – | ग म | रे सा

× ० २ ० ३ ४

(२) राग मुलतानी—

प मं | ग प | – प | मं ग | मं ग | रे सा

× ० २ ० ३ ४

(३) राग वृन्दावनी सारंग—

नि नि | प म | प रें | म रे | सा रे | नि सा

× ० २ ० ३ ४

रूपक ताल

(१) राग वृन्दावनी सारंग—

रे रे सा | नि सा | नि प

× २ ३

(२) राग केदार—

म – रे | सा रे | नि सा

× २ ३

आड़ा चारताल

(१) राग तिलंग—

सां — | नि प | ग म | ग — | — सा | ग म | प नि
० ४ ० × २ ० ३

(२) राग जयजयवन्ती—

रे रे | सा रे | ग म | प म | ग म | रे ग | रे सा
× २ ० ३ ० ४ ०

धमार ताल

(१) राग वृन्दावनी सारंग—

रे म प नि | सां — नि प म | प म | रे — सा
३ × २ ०

(२) राग मालकोश—

ग म ध नि | सां — ध नि ध | म — | ग म ग सा
३ × २ ०

□

घरानेदार बंदिशें

तीनताल—मात्रा १६

ततकार

ता – थे ई | थे ई त त | आ – थे ई | थे ई त त
× २ ० ३

दुगुन लय में—

ता- थेई थेई तत | आ- थेई थेई तत | ता- थेई थेई तत |
× २ ०

आ- थेई थेई तत |
३

चौगुन लय में—

ता-थेई थेईतत आ-थेई थेईततं | ता-थेई थेईतत आ-थेई थेईतत |
× २

ता-थेई थेईतत आ-थेई थेईतत | ता-थेई थेईतत आ-थेई थेईतत |
० ३

ततकार के प्रकार

१—ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता- तत – |
× २

ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता- तत – |
० ३

२—ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता- तत तत
×   २

ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता- तत तत
०   ३

३—ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता- तत-त -तत-
×   २

ता-थेई थेईता- आथेई थेईता- | आ-थेई थेईता- तत-त -तत-
०   ३

४—ता-थेई थेइता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता-ततत्त तततत
×   २

ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता- | ता-थेई थेईता- ततत्त तततत
०   ३

५—तत-- ता-थेई थेईता- तत-- | ता-थेई थेइता- आ-थेई थेईता-
×   २

तत-- ता-थेई थेईता- तत-- | ता-थेई थेईता- आ-थेई थेईता-
०   ३

६—थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
×   २

थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
०   ३

७—थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
×   २

थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
०   ३

८—थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
×   २

थेई थेई ता ता | तत – तत –
०   ३

९—थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
×   २

थेई थेई ता ता | तत ता तत ता
०   ३

१०—थेई थेई ता ता | थेई थेई ता ता
×   २

थेई थेई ता ता | तत -त -त ता
०   ३

आमद

(१)

धा त क थूं | गा – धा गे | दिं ग ता – |
×   २   ०

धा दिं ता – | धित् ता किड़ धा | तक का थूं गा |
३   ×   २

ताकि टत का — | क्टि कत गदि गन | ता थेई तत थेई।
० ३ ×

आ थेई तत थेई | थेई तत थेई, थेई | तत थेई, थेई तत।
२ ० ३

(२)

तिग,दा दिगदिग तिग,दा दिगदिग | तिग,धे —,—त
× २

तिग,दा दिगदिग | तत तत तिग,दा दिगदिग |
०

तिकधे— ——,त तिग,दा दिगदिग | थेई —
×
३

तिग,दा दिगदिग | तिकधे— —,—ता तिग,दा दिगदिग |
२

थेई — तिग,दा दिगदिग | तिकधे— —,—ता
० ३

तिग,दा दिगदिग |

सलामी

(१)

तत तत ता,थेई थेई | ता आ,थेई थेई ता | तत तत थेई तत
× २ ०

तत थेई तत तत ।
३

(२)

तत तत ता,थेई थेईतत । आ,थेई थेईतत तत तत ।
× २
थेई याथे इया आम । तततत ताथेईथेईतत आथेईथेतत तततत ।
० ३

टुकड़ा

(१)

तिग,दा —,तिग दा— थेई । तिग,दा —,तिग दा— थेई ।
× २
तिग,दा दिगदिग थेई तिग,दा । दिगदिग थेई तिग,दा दिगदिग ।
० ३

(२)

तत तत थूं थूं । तिग,दा दिगदिग थेई — ।
× २
तिग,दा दिगदिग थेई तिग,दा । दिगदिग थेई तिग,दा दिगदिग ।
० ३

(३)

आमथेई आमथेई तिगदाऽदिगदिग थेई । आमथेई आमथेई
× २

तिगदाऽदिगदिग थेई | आमथेई आमथेई तिगदाऽदिगदिग थेई |

०

तिगदाऽदिगदिग थेई, तिगदाऽ दिगदिग, थेई तिगदाऽदिगदिग |

३

(४)

ता, थेई ततथेई तिगदाऽदिगदिग थेई | ता, थेई ततथेई

×   २

तिगदाऽदिगदिग थेई | ता, थेई ततथेई तिगदाऽदिगदिग थेई |

०

तिगदाऽदिगदिग थेई तिगदाऽ दिगदिग, थेई तिगदाऽदिगदिग

३

(५)

ततथत थेईथेई तिगदाऽदिगदिग थेई | ततथत थेईथेई

×   २

तिगदाऽदिगदिग थेई | ततथत थेईथेई तिगदाऽदिगदिग थेई

०

तिगदाऽदिगदिग थेई, तिगदाऽ दिगदिग, थेई तिगदाऽदिगदिग |

३

(६)

तिगदाऽतिग	दाऽथेई	तिगदाऽतिग	दाऽथेई |
×			
ताऽथेईथेईता	आऽथेईथेईता	थेईथेई	थेईथेई |
२			
तिगदा,तिग	दाऽथेई	तिगदाऽतिग	दाऽथेई |
०			
ताऽथेईथेईताऽ	आऽथेईथेईताऽ	थेईथेई	थेईथेई |
३			
तिगदाऽतिग	दाऽथेई	तिगदाऽतिग	दाऽथेई |
×			
ताऽथेईथेईता	आऽथेईथेईता	थेईथेई	थेईथेई |
२			
ताऽथेईथेईता	आऽथेईथेईताऽ	थेईथेईथेईथेई	ताऽथेईथेईताऽ |
०			
आऽथेईथेई	थेईथेईथेईथेई	ताऽथेईथेईताऽ	आऽथेईथेईता |
३			

(७)

तिगदाऽऽऽतिग	दा,थेई	तिगदाऽऽऽतिग	दा,थेई |
×			

तिगदाऽदिगदिग   थेईत्राम   थेई   तत |

२

तिगदाऽऽऽतिग   दा,थेई   तिगदाऽऽऽतिग   दा,थेई |

०

तिगदाऽदिगदिग   थेईत्राम   थेई   तत |

३

तिगदाऽऽऽतिग   दा,थेई   तिगदाऽऽऽतिग   दा,थेई |

×

तिगदाऽदिगदिग   थेईत्राम   थेई   तत |

२

तिगदाऽदिगदिग   थेईत्राम   थेई   तिगदाऽदिगदिग |

०

थेईत्राम   थेई   तिगदाऽदिगदिग   थेईत्राम |

३

(८)

तत   तत   थेई   ऽऽ | दिग   दिग   थेई   ऽऽ

×   २

तिग	दा	थेई	त्राम	थेई	तत	थेई	ऽऽ
०				३			
त	ता	ऽ	त	थेई	—	त	ता
×				२			
ऽ	त	थेई	—	त	ता	ऽ	त
०				३			

(९)

ता	थेई	तत	थेई	आ	थेई	तत	थेई
×				२			

तिगधाऽदिगदिग	थेईत्राम	थेईऽऽ	तिगधादिगदिग
०			
थेईत्राम	थेई	तिगधाऽदिगदिग	थेईत्राम
३			

(१०)

तिगदाऽदिगदिग	दिगथोंऽदिगदिग	थेईतत	ऽतथेई
×			
ता,थेई	कुकुधाऽ	तिगदाऽदिगदिग	दिगथोंऽदिगदिग
२			

थेइताऽ थेई,तिगदाऽ दिगदिगदिगथोंऽ दिगदिगथेईऽऽ |
०
ता,थेई तिगदाऽदिगदिग दिगथोंऽदिगदिग थेई,ता |
३

(११)

चक्करदार—

त्रामथेई त्रामथेई ततत त्रामथेई | तिगदाऽदिगदिग थेई
×   २
तिगदाऽदिगदिग थेई,तिगदाऽ | दिग,दिग,थेई तिगदाऽदिगदिग ||
                            ०
थेई त्रामथेई | त्रामथेई ततत त्रामथेई तिगदाऽदिगदिग
               ३
थेई तिगदाऽदिगदिग थेई,तिगदा दिगदिग,थेई |
×
तिगदाऽदिगदिग थेई त्रामथेई त्रामथेई | ततत त्रामथेई
२   ०
तिगदाऽदिगदिग थेई | तिगदाऽदिगदिग थेई,तिगदाऽ
                   ३
दिगदिग,थेई तिगदाऽदिगदिग |
                         ×

छकवार

तिगदाऽऽतिग दा,थेई तिगदाऽऽतिग दा,थेई ।
×

ताऽथेईथेईता: आऽथेईथेईताऽ थेई,ता थेई ।
२

ताऽथेईथेईता आऽथेईथेईताऽ थेई,ता थेई ।
०

ताऽथेईथेईताऽ आऽथेईथेईताऽ थेई,ता थेई ।
३

तिगदाऽऽतिग दा,थेई तिगदाऽऽतिग दा,थेई ।
×

ताऽथेईथेईताऽ आऽथेईथेइताऽ थेई,ता थेई ।
२

ताऽथेईथेईताऽ आऽथेईथेईताऽ थेई,ता थेई ।
०

ताऽथेईथेताऽ आऽथेईथेईताऽ थेई,ता थेई ।
३

तिगदाऽऽऽतिग दा,थेई तिगदाऽऽऽतिग दा,थेई |
×
ताथेईथेईता आऽथेईथेईता थेई,ता थेई |
२
ताथेईथेईताऽ आऽथेईथेईताऽ थेई,ता थेई |
०
ताथेईथेईताऽ आथेईथेईता थेई,ता थेई |
३

(१३)

ततत थेई तिगदातत थेई | ततत तिगदातत
× २
ततऽतथे ईततऽत | थेई तिगदातत ततऽतथे ईततऽत |
०
थेई तिगदातत ततऽतथे ईततऽत |
३

कवित्त

(१)

मुरलीकी धुनसुन आई राधा | आई राधा जमुनाके तटपर
●

जमुंनाके तटपर निरतक रतउठ | हिरतफि रतचित वंऽच
× २
मक, दिगदिग | नादिगदिगना दिगदिगदिगदिग थौंदिगदिगदिग
०
दिगदिगथों | त्रामतत थेईतत थेईतत थेईतत |
३ ×

(२)

नीऽरभ रत, जमु नाऽतट परजब | भरभर नीरऽउ ठाऽयोग
× २
गरतव | डगरच लतमोहे छेड़तल गरहट | जाओजील गरफुट
० २
जैहींऽग गरमोहे | छोऽऽड़ छोऽड़मा धोमा धोमा |
×
धो ऽमोहे छोऽऽड़ छोऽड़मा | धोमा धोमा धो ऽमोहे |
२ ०
छोऽऽड़ छोऽड़मा धोमा धोमा |
३ ×

(३)

नाऽचत श्यामसं गीऽतम धुरधुन | बाऽजत घुंघरूऽ झननन झननन
× २

ताऽथेई ताऽथेई ताऽथेई ततथेई | ताऽथेई ततथेई ताऽथेई ततथेई
० ३

चक्करदार—

मैंऽदधि बेऽचन जाऽतवृं दाऽवन | आऽनअ चाऽनक
× २

घेऽरलि योऽमोरी | फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत |
०

गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि | या ऽ,मोरी
३ ×

फोऽरत गाऽगरि | याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी |
२

फोऽरत गाऽगरि या ऽ,मोरी | फोऽरत गाऽगरि
० ३

याऽमोरी फोऽरत | गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि
×

या — मैंऽदधि बेऽचन | जाऽतवृं दाऽवन
२ ०

आऽनअ चाऽनक | घेऽरलि योऽमोरी फोऽरत गाऽगरि |
३

याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी | फोऽरत गाऽगरि
× २

या ऽमोरी | फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत |
०

गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि | या ऽमोरी
३ ×

फोऽरत गाऽगरि | याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी |
२

फोऽरत गाऽगरि या —, | मैंऽदधि बेऽचन
० ३

जाऽतबृं दाऽवन | आऽनअ चाऽनक घेरऽलि योऽमोरी |
×

फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत | गाऽगरि याऽमोरी
२ ०

फोऽरत गाऽगरि | या ऽमोरी फोऽरत गाऽगरि |
३

याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी | फोऽरत गाऽगरि
× २

या ऽमोरी | फोऽरत गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत |
०

गाऽगरि याऽमोरी फोऽरत गाऽगरि | ×
३

परन

तिगदाऽदिगदिग थेईत्राम थेई,ता तिगदादिगदिगथेईतिग |
×
दादिगदिगथेईतिगदाऽ दिगदिग थेई,तिगदादिगदिग
२
थेईतिगदादिगदिग | थेई,तिगदादिगदिग थेईतिगदादिगदिग
०
थेई तिगदादिगदिग | थेईत्राम थेई,ता तिगदादिगदिगथेईतिग
३
दादिगदिगथेईतिगदाऽ | दिगदिग थेईतिगदादिगदिग
×
थेईतिगदादिगदिग थेई,तिगदादिगदिग | थेईतिगदादिगदिग थेई
२
तिगदाऽदिगदिग थेईत्राम | थेई,ता तिगदादिगदिगथेईतिग
०
दादिगदिगथेईतिगदाऽ दिगदिग | थेई,तिगदादिगदिग
३
थेईतिगदादिगदिग थेई,तिगदादिगदिग थेईतिगदादिगदिग | थेई
×

(२)

ताँततत थेई ततत थेई | ततत थेई ततत थेई |
×　　　　　　　　२

धीकी ऽट नग ऽन | के,तिट धा ततत थेईत्राम |
०　　　　　　　　३

थेइतत थेई ततत थेईतत | ततथेई ततत थेई ततत |
×　　　　　　　　२

थेईतत ततथेई ततत थेई | ततत थेईतत ततथेई ततत |
०　　　　　　　　३

तिहाई

(१)

तिगदा दिगदिग थेईऽऽ तिगदा | दिगदिग थेईऽऽ तिगदा दिगदिग |
०　　　　　　　　३

(२)

ततत्राम ततत थेईऽऽ ततत्राम | ततत थेईऽऽ ततत्राम ततत |
०　　　　　　　　३

(३)

ततत्राम तथेईत थेईऽऽ ततत्राम | तथेईत थेईऽऽ ततत्राम तथेईत |
०　　　　　　　　३

(४)

दिगदिग थेईथेई तत दिगदिग | थेईथेई तत दिगदिग थेईथेई |
०　　　　　　　　३

(५)

तिरकिट थेईऽत थेईऽऽ तिरकिट | थेईऽत थेईऽऽ तिरकिट थेईऽत
० २

(६)

थेईतत थेईथेई थेईऽऽ थेईतत | थेईथेई थेईऽऽ थेईतत थेईथेई
० ३

पन्द्रहवीं मात्रा से—

(७)

तत | तत थेई तिगदाऽ तत | थेई तत तत थेई
× २

तिगदाऽ तत थेईऽऽ तत | तत थेई तिगदाऽ तत
० ३

(८)

थेई त्राम थेई तंत | थेई ऽ थेई त्राम
× २

थेई तत थेई ऽ | थेई त्राम थेई तत
० ३

(९)

तत तत थेई,त थेई,त | थेई ऽ तत तत
× २

थेई,त थेई,त थेई ऽ | तत तत थेई,त थेई,त
० ३

(१०)

तिगदाऽ	दिगदिग	थेई	तत	| थेई	ऽ	तिगदाऽ	दिगदिग
×				२			
थेई	तत	थेई	ऽ	| तिगदाऽ	दिगंदिग	थेई	तत
०				३			

(११)

बेदम तिहाई—

तिरकिट	थेई	ऽता	थेई	| ऽता	थेई,तिर	किट,थे	ऽई
×				२			
ताथे	ईऽ	ता,थेई	तिरकिट	| थेई	ऽता	थेई	ऽता
०				३			

—

झपताल

मात्रा १०, विभाग ४, ताली १, ३, ८ पर और ६ पर खाली

ततकार

ता	थेई	थेई	त	ऽत	आ	थेई	थेई	त	ऽत
×		२			०		३		

ततकार के प्रकार

(१)

ता	थेई	थेई	थेई	तत	आ	थेई	थेई	तत	तत
×		२			०		३		

(२)

ता	थेई	थेई	तत	तत	आ	थेई	थेई	थेई	तत
×		२			०		३		

(३)

ता	थेई	थेई	तततत	तततत	आ	थेई	थेई	तततत	तततत
×		२			०		३		

(४)

ता	थेई	थेईथेई	ततथेई	थेई,ता	आ	थेई	थेईथेई	ततथेई	थेई,ता
×		२			०		३		

(५)

ता	थेई	ताथेई	ताता	थेईता	आ	थेई	ता,थेई	ताता	थेई,ता
×		२			०		३		

(६)

थेईथेई ताता | थेईथेई ताता तत | थेईथेई ताता | थेईथेई ताता तत
× २ ० ३

(७)

थेईथेई तत | थेईथेई थेईथेई तत | थेईथेई तत | थेईथेई थेईथेई तत
× २ ० ३

सलामी

तत तत | ताथेई थेईतत आथेई | थेईतत तत | तत थेई याथे
× २ ० ३

ईया ग्राम | ततत ता,थेई,थेई,तत आ,थेई,थेई,तत | ततत थेईऽऽ
× २ ०

ततत थेईऽऽ ततत |
३ ×

टुकड़ा

(१)

तत तत | थेई थेई तत | थेई तत | थेई थेई याथे
× २ ० ३

ईया थेई | तत तत ताऽ | तत तत | ताऽ तत तत
× २ ० ३

(२)

तत तत | थेई — तत | तत थेई | — तत थुं
× २ ० ३

तत थुं | तत तत थेई | — धा | कत ता कत
× २ ० ३

धा कत | ता कत थेई | याथे इया | थेई तिगदा दिगदिग
× २ ० ३

थेई आम | थेई — थेई | आम थेई | — थेई आम
× २ ० ३

चक्करदार

(३)

ततत ताऽथेईथेईताऽ | आऽथेईथेईता ततत थेई
× २

ता ततत | थेई,तत ततथेई ततत
० ३

थेई ततत | थेईतत ततथेई ततत
× २

थेई ततत | थेईतत ततथेई ततत
० ३

(४)

थुं थुं | तत तत तिगदाऽ | दिगदिग थेई
× २ ०

— तिगदाऽ दिगदिग | थेई तिगदाऽ | दिगदिग थेई तिगदाऽ
३ × २

दिगदिग थेई | थुं थुं तत | तत तिगदाऽ | दिगदिग थेई |

० ३ × २

तिगदाऽ दिगदिग | थेई तिगदाऽ दिगदिग | थेई तिगदाऽ |

० ३ ×

दिगदिग थेई थुं | थुं तत | तिगदाऽ दिगदिग | थेई —|

२ ० ३ ×

तिगदाऽ दिगदिग थेई | तिगदाऽ दिगदिग | थेई तिगदाऽ

२ ० ३

दिगदिग |

(५)

ततत ताऽथेईथेईता | आथेईथेईताऽ ततत्राम थेई |

× २

ततत ताऽथेईथेईता | आथेईथेईताऽ ततत्राम थेई |

० ३

ततत्राम थेई | ततत ताऽथेईथेईताऽ आऽथेईथेईताऽ |

× २

ततत्राम थेई | ततत्राम थेई ततत्राम |

० ३

परन

अक्षू	ऽऽमत	|	ताऽथेईथेईताऽ	आऽथेईथेईताऽ	ततत्त |
×			२		
थेई,	अक्षू	|	ऽऽमत	ताऽथेईथेईता	आऽथेईथेईताऽ |
०			३		
ततत्त	थेई	|	अक्षू ऽऽमत		ताऽथेईथेईताऽ |
×			२		
आऽथेईथेईताऽ	ततत्त	|	थेईतत	ततथेई	ततत्त |
०			३		

कवित्त

नटवर	नाऽचत	|	संगीत	गीत	भाँऽतिभाँ |
×			२		
ऽतिगत	नई	|	नई	ताऽपर	पगजू |
०			३		
नूऽपर	बाऽजत	|	थोंऽदृग	त्रामत्राम	थेई |
×			२		
थोंऽदृग	त्रामत्राम	|	थेई,	थोंऽदृग	त्रामत्राम |
०			३		

तिहाई

(१)

तिगधादिगदिग तिगधादिगदिग | थेईतत थेई,तिगधा
×   २
दिगदिगतिगधा | दिगदिगथेई ततथेई | तिगधादिगदिग
०   ३
तिगधादिगदिग थेईतत |

(२)

तिगधादिगदिग थेईत्राम | थेइता ऽ,तिगधा दिगदिगथेई |
×   २
त्रामथेई ताऽ | तिगधादिगदिग थेईत्राम थेईता |
०   ३

(३)

तिगधादिगदिग तिगधादिगदिग थेईताऽथेई | –,ता
×   २
तथेई,तिगधादिगदिग तिगधादिगदिगथेईता | थेई ता,तथेई |
                                    ०
तिगधादिगदिगतिगधादिगदिग थेईताऽथेई –ता | थेई
३   ×

धमार ताल

मात्रा १४, विभाग ४, ताली १, ६, ११ पर और खाली ८ पर

ततकार

ता थेई ऽ थेई ऽ | त ऽत | आ थेई ऽ | थेई ऽ त ऽत
× 　　　　　　　२ 　　　० 　　　　३

ततकार के प्रकार

(१)

ता थेई ऽ थेई ऽ | त ऽत | आ थेई ऽ | थेई ऽ त ऽत
× 　　　　　　　२ 　　　० 　　　　३

(२)

ता थेई तत थेई तत | त ऽत | आ थेई तत | थेई तत त ऽत
× 　　　　　　　　२ 　　　० 　　　　３

(३)

ता थेई ऽ थेईथेई ता | थेईथेई ता | आ थेई ऽ | थेईथेई ता थेईथेई ता
× 　　　　　　　　२ 　　　　० 　　　३

(४)

ता थेई ऽ थेई तत | त ऽत | आ थेई ऽ | थेई तत त ऽत
× २ ० ३

(५)

ता थेई थेई थेई तत | थेई तत | आ थेई थेई | थेई तत थेई तत
× २ ० ३

(६)

ता थेई ता थेई तत | थेई तत | आ थेई ता | थेई तत थेई तत
× २ ० ३

आमद

ताऽथेई ततथेई आऽथेई ततथेई थेई | ता थेईथेई | ततत्त
× २ ०
थेई थेईथेई | ततत्त थेई थेईथेई ततत्त |
३

सलामी

तत तत ताऽथेई थेईताऽ आऽथेई | थेईताऽ तत |
× २
तत थेई तत | तत थेई तत तत |
० ३

टुकड़ा

(१)

दिगदिग तरऽङ्ग तातो तरऽङ्ग तकथुन | थुनतक थुनथुन
×   २
तिगदा,दिगदिग थेईतक थुनथुन | तिगदा,दिगदिग थेईतक
०   ३
थुनथुन तिगदाऽदिगदिग |
×

(२)

ताऽथुङ्गा तक्काथुङ्गा तिग्धेत तक्काथुङ्गा दिगदिग |
×
दिग्थेई ता,तत | थेईतत थेईतत थेईतत | थेईतत थेईतत
२   ०   ३
थेईतत थेईतत |
×

(३)

ततथेई ततथेई घिकिट नगन कितिटधाऽ | तततततथेईत्राम
×   २
थेईततथेई | ततथेई ततथेई ततथेई | ततथेई ततथेई ततथेई
०   ३
ततथेई |
×

(४)

ततटत ताऽदृग धिंधिं झिंझिकत थोऽथरं | ऽगतक थुनथुन
× २

तिगदाऽदिगदिग थेईतक थुनथुन | तिगदादिगदिग थेईतक
० ३

थुनथुन तिगदाऽदिगदिग |
×

(५)

तत तत ताऽथेई थेईताऽ थेईताऽ आऽथेई | थेईताऽ तत |
× २

तत थेई तत | तत थेई तत तत | थेई
० ३ ×

(६)

ताऽथेई थेईतत आऽथेई थेईतत थेई | याथे इया |
× २

त्राम थेई याथे | इया त्राम तत तत |
० ३

तिगदाऽ दिगदिग थेई दिगदिग थेई | तिगदाऽ दिगदिग |
× २

थेई दिगदिग थेई | तिगदाऽ दिगदिग थेई दिगदिग |
० ३

तिहाई

(१)

तिगदाऽ दिगदिग थेईतत थेईतत थेई | तिगदाऽ दिगदिग |
×　　　　　　　　　　　　　　　२

थेईतत थेईतत थेई | तिगदा दिगदिग थेईतत थेईतत |
०　　　　　　　　　३

(२)

तिगदा दिगदिग थेईत्राम थेईतत थेई | तिगदा दिगदिग |
×　　　　　　　　　　　　　　　२

थेईत्राम थेईतत थेई | तिगदा दिगदिग थेईत्राम थेईतत |
०　　　　　　　　　३

(३)

तत थेई तत तत थेई, | तत थेई | तत तत थेई, |
×　　　　　　　　　२　　　　०

तत थेई तत तत |
३

(४)

थेईतत थेईतत थेईऽत थेईऽत थेईऽऽ | थेईतत थेईऽत |
×　　　　　　　　　　　　　　　२

थेईऽत थेईऽत थेईऽऽ | थेईतत थेईऽत थेईऽत थेईऽत |
०　　　　　　　　　३

(५)

तिगदाऽदिगदिग थेई,तिगदाऽ दिगदिग,थेई तिगदाऽदिगदिगदिग
×
थेई | तिगदाऽदिगदिग थेई,तिगदाऽ | दिगदिग,थेई
२ ०
तिगदाऽदिगदिग थेई, | तिगदादिगदिग थेई,तिगदाऽ
३
दिगदिग,थेई तिगदाऽदिगदिग |
×

एकताल

मात्रा १२, विभाग ६, ताली १, ५, ९, ११ पर और खाली ३, ७ पर

ततकार

ता थेई | थेई तत | थेई थेई | आ थेई | थेई तत | थेई थेई
× ० २ ० ३ ४

ततकार के प्रकार

(१)

ता थेई | थेई तत | थेई तत | आ थेई | थेई तत | थेई तत
× ० २ ० ३ ४

(२)

ता थेई | तत थेई | तत तत | आ थेई | तत थेई | तत तत
× ० २ ० ३ ४

(३)

ता थेई | तत थेई | त ऽत | आ थेई | तत थेई | त ऽत
× २ ० ३ ४

(४)

ता थेई | त ऽत | त ऽत | आ थेई | त ऽत | त ऽत
× ० २ ० ३ ४

(५)

ता थेई | थेईथेई तत | थेईथेई तत | आ थेई | थेईथेई तत |
× ० २ ० ३

थेईथेई तत |
४

(६)

ता थेईथेई | ततथेई थेईतत | थेईथेई तत | आ थेईथेई | ततथेई
× ० २ ० ३

थेईतत | थेईतत तत |
४

(७)

ता थेईथेई | ता थेईथेई | ता तत | आ थेईथेई | ता थेईथेई |
× ० २ ० ३

ता तत |
४

(८)

थेईथेई ता,थेई | थेई,ता थेईथेई | तत तत | थेईथेई ता,थेई |
× ० २ ०

थेई,ता थेईथेई | तत तत |
३ ४

(९)

थेईथेई ततथेई | थेईतत थेईथेई | ततत तत | थेईथेई ततथेई |
× ० २ ०

थेईतत थेईथेई | तततत तत |
३ ४

(१०)

तततत थेई | तततत थेई | तत तत | तततत थेई | तततत थेई |
× ० २ ० ३

तत तत |
४

आमद

ता थेई | तत थेई | ता थेई | तत थेई | थेई थेई | तत तत |
× ० २ ० ३ ४

ता — | थेई थेई | तत तत | ता — | थेई थेई | तत तत |
× ० २ ० ३ ४

टुकड़ा

(१)

एक दो तीन चार पाँच | छ, त्राम थेईतत | थेईतत थेईथेई |

× ० २

–,त्राम थेईतत | थेईत्राम थेईतत | थेईत्राम थेईतत |

० ३ ४

(२)

त्रिमलू

तकाऽत काऽतक | थुंऽगथुं ऽगतत | तततकाऽतिग दाऽदिगदिग |

× ० २

थेई तततकाऽदिग | दाऽदिगदिग थेई | तततकाऽदिग दाऽदिगदिग |

० ३ ४

(३)

तत तत | ता दिग | थुं थुं | झिझ कत | थो थरां |

× ० २ ० ३

ऽम तक | थुं थं | तिगदाऽ दिगदिग | थेई – |

४ × ० २

तिगदा दिगदिग | थेई – | तिगदाऽ दिगदिग |

० ३ ४

(४)

तिगदाऽ ऽतिग | दा थेई | तिगदा ऽतिग | दा थेई | तिगदाऽ
× ० २ ० ३

थेई | तिगदाऽ थेई | तिगदाऽ थेई | तत तिगदाऽ | थेई तत |
४ × ० २

तिगदाऽ थेई | तिगदाऽ थेई | तत तिगदा | थेई तत | तिगदाऽ
० ३ ४ × ०

थेई | तिगदाऽ थेई | तत तिगदाऽ | थेई तत | तिगदाऽ थेई |
२ ० ३ ४

(५)

तत तत | थुं थुं | तिगदाऽ दिगदिग | थेई — | तत तत |
× ० २ ० ३

थुं थुं | तिगदाऽ दिगदिग | थेई — | तिगदाऽ दिगदिग |
४ × ० २

थेई तिगदाऽ | दिगदिग थेई | तिगदाऽ दिगदिग |
० ३ ४

आड़ा चारताल

मात्रा १४, विभाग ७, ताली १, ३, ७, ११ पर और खाली ५, ६, १३ पर।

ततकार

ता थेई | थेई तत | थेईथेई ता,थेई | थेई,ता आ | थेई थेई |

× २ ० ३ ०

तत थेईथेई | ता,थेई थेई,ता |

४ ०

ततकार के प्रकार

(१)

ता थेई | – तत | थेईथेई ता,थेई | थेईता आ | थेई – |

× २ ० ३ ०

तत थेईथेई | ता,थेई थेई,ता |

४ ०

(२)

ताथे ईता | थेई तत | थेईथेई ततथेई | थेईतत आथे | ईता थेई |

× २ ० ३ ०

तत थेईथेई | ततथेई थेईतत |

४ ०

(३)

ता थेई | थेईतत थेईतत | थेईतत ता,थेई | थेई,ता आ |
× २ ० ३
थेई थेईतत | थेईतत थेईतत | ता,थेई थेई,ता |
० ४ ०

(४)

ता थेई | थेईथेई ततथेई | थेईतत थेई | तत आ |
× २ ० ३
थेई थेईथेई | ततथेई थेईतत | थेईथेई तत |
० ४ ०

(५)

थेईथेई ततथेई | थेईतत थेई | तत थेई | तत थेईथेई |
× २ ० ३
ततथेई थेईतत | थेई तत | थेई तत |
० ४ ०

संगीत की उपयोगी पुस्तकें

कक्षा ६, ७, ८ के लिये

बाल संगीत परिचय—शास्त्र और क्रियात्मक

हाई स्कूल अथवा प्रथम और द्वितीय वर्षों के लिए

(१) राग परिचय भाग एक—गायन और तन्त्र वाद्य
(२) संगीत प्रश्नोत्तर भाग एक—गायन और तन्त्र वाद्य
(३) तबला प्रकाश अथवा ताल परिचय भाग एक—तबला
(४) मधुर स्वरलिपि संग्रह भाग एक—गायन क्रियात्मक

इन्टर अथवा तृतीय और चतुर्थ वर्षों के लिए

(१) राग परिचय भाग दो—गायन और तन्त्र वाद्य
(२) संगीत प्रश्नोत्तर भाग दो—गायन और तन्त्र वाद्य के प्रश्नोत्तर
(३) मधुर स्वरलिपि संग्रह भाग दो—गायन क्रियात्मक
(४) संगीत निबन्ध संग्रह—गायन, तन्त्र वाद्य और तबला
(५) तबला प्रकाश अथवा ताल परिचय भाग दो—तबला

बी० ए०, संगीत प्रभाकर तथा विशारद के लिए

(१) राग परिचय भाग तीन—गायन और तन्त्र वाद्य
(२) प्रभाकर प्रश्नोत्तर—संगीत प्रभाकर के प्रश्नोत्तर
(३) संगीत निबन्ध संग्रह—गायन, तन्त्र वाद्य और तबला
(४) राग शास्त्र भाग एक और दो—गायन कियात्मक
(५) राग प्रभाकर—गायन (शास्त्र और क्रियात्मक)
(६) मधुर स्वरलिपि संग्रह भाग ३—गायन (क्रियात्मक)

एम० ए०, संगीत प्रवीण व अलंकार के लिए

(१) राग परिचय भाग चार—गायन और तन्त्र वाद्य
(२) प्रवीण प्रवाह—प्रवीण प्रश्नोत्तर (गायन व तन्त्र वाद्य)
(३) अभिनव गीतांजलि भाग १, २, ३—गायन क्रियात्मक

क्रमिक पुस्तक मालिका (भातखंडे) भाग १ से ६ तक प्रकाशित

प्राप्ति स्थान

संगीत सदन प्रकाशन

साउथ मलाका, इलाहाबाद, ☎ ६०५६७३